Uttar Pradesh Rajarshi Tandon
Open University

MAHY-111

इतिहास दर्शन एवं लेखन सिद्धान्त एवं प्रवृत्तियाँ
(भाग–एक)

खण्ड
1

इतिहास के आयाम एवं इतिहास लेखन

इकाई– 1

इतिहास की अवधारणा, प्रवत्ति एवं प्रकृति 3

इकाई– 2

इतिहास चिन्तन की परम्परा का विकास एवं क्षेत्र महत्व 13

इकाई– 3

इतिहास के स्त्रोत: प्राथमिक एवं द्वितीयक 23

इकाई– 4

इतिहास के साहित्यिक एवं गैर – साहित्यिक स्त्रोत 29

इकाई– 5

शोध विधि और इतिहास लेखन 43

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,प्रयागराज

इतिहास दर्शन एवं लेखन : सिद्धान्त एवं प्रवृत्तियाँ

परामर्श समिति

प्रो0 सीमा सिंह — माननीया कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

कर्नल विनय कुमार — कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — निदेशक, समाज विज्ञान, विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य,इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
इकाई- 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10,11,12,13,14,15 (खण्ड 1,2,3)

प्रो0 एम0 पी0 अहिरवार — आचार्य, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
इकाई- 1,2,3,4,5, (खण्ड 5)

डॉ0 रमाकान्त — सह आचार्य, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
इकाई- 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10 (खण्ड 4, 6)

सम्पादक

प्रो0 विजय बहादुर सिंह यादव — आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले रूहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली (इकाई 1 - 30)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रित वर्ष - 2023

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. - 978-93-94487-55-0

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट :पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायीं नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से कर्नल विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित **2024.**

मुद्रक :चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा. लि. 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज.

इकाई : 01 – इतिहास की अवधारणा, प्रवृत्ति एवं प्रकृति

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 विषयगत अवधारणा

1.3 देश–धर्मगत अवधारणा

1.4 कालगत अवधारणा

1.5 विचारगत अवधारणा

1.6 इतिहास की प्रकृति एवं प्रवृत्ति

1.7 इतिहास की भारतीय अवधारणा

1.8 सारांश

1.9 शब्दावली

1.10 बोध प्रश्न

1.11 सहायक ग्रन्थ

1.0 उददेश्य–

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे–

- इतिहास की विभिन्न अवधारणाओं के विषय में।
- इतिहास की परम्परा के विकास के विभिन्न आयामों के विषय में।

1.1 प्रस्तावना

इतिहास शब्द इति+ह+आस से मिलकर बना है जिसका अर्थ निश्चित रूप से ऐसा हुआ था। आचार्य दुर्ग ने अपने निरूक्त में इतिहास की परिभाषा इस प्रकार की है–**इतिहैवमासीदिति तथ्य कथ्यते च इतिहासः**। इतिहास की परिभाषा एवं अर्थ को लेकर इतिहासकारो में मतभेद है। इतिहास की अवधारणा काल एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होता रहा है। समस्त विषयों में प्रायः सर्वप्रथम उस विषय के प्रति मन में उत्पन्न विचारो की ओर ध्यान जाता है, इसे ही उस विषय के प्रति चिन्तकों लिए भी विद्वानों के मन में तरह–तरह की अवधारणा उत्पन्न हुई थी और उन्होने अपने–अपने चिन्तन के आधार पर इतिहास के विभिन्न तत्वों का समावेश किया था। कतिपय अवधारणाओं ने इतिहास को निश्चित रूप में मानव समाज के जीवन का संकलन, व्यक्ति समूह की परिस्थितियों का अध्ययन, महान व्यक्तियों की आत्म–कथा, मानव जीवन के महान कार्यो एवं असाधारण सफलताओं का संकलन मानवीय विचारों, आदर्शो एवं महत्वाकांक्षाओं द्वारा निर्मित मनुष्य के सामाजिक जीवन का अध्ययन माना है। इतिहास को जिस तरह से विभिन्न विद्वानों ने भिन्न–भिन्न प्रकार से देखा, समझा और प्रस्तुत किया था। उसी तरह से उसे विभिन्न विषयों के सातत्य से भी देखा तथा जाना गया था। इसके विषय में भारतीय एवं पाश्चात्य विचारों में भी अन्तर था। यही नहीं पाश्चात्य देशों में भी विभिन्न धर्म–सम्प्रदायों की पृथक–पृथक मान्यताओं के आधार पर इतिहास के प्रति लोगों की भिन्न–भिन्न अवधारणायें बनी हुई थी। विभिन्न कालो में इसके प्रति लोगों के अनेक तरह के विचार–भाव थे।

1.2 विषयगत अवधारणा

इतिहास में समय, व्यक्ति, स्थान और घटना का महत्वपूर्ण स्थान हैं। कुछ विद्वान इनको ही इतिहास का अध्ययन–विषय भी मानते हैं और उनके अनुसार जिस विषय में इनका उल्लेख नहीं होता उसे इतिहास नहीं मानते है, जो विद्वान इतिहास में विज्ञान और कला का सन्निवेश पाते हैं, वे उसे इतिहास कहते है। उदाहरणार्थ–पुराणों, महाकाव्यों आदि को आधुनिक इतिहासकार इसी आधार पर इतिहास मानने से पीछे हटते हैं। धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र आदि विषयों के साथ इतिहास का सम्बन्ध स्थापित किये जाने के आधार पर भी कुछ विद्वान यह कहते है कि इतिहास एक ऐसा विषय है जिसका क्षेत्र बहुत व्यापक है, इतना व्यापक कि यह सभी विषयों का मुख्य स्रोत माना जा सकता है। इसके विपरीत कुछ इतिहासकारों की अवधारणा यह भी है कि आरम्भ में इतिहास केवल राजनीति के अध्ययन का आधार था, जबकि अन्य लोगों ने उसे निष्पक्ष एवं सम्पूर्ण अध्ययन कहा है। वर्तमान समय में तो स्थिति यह हो गयी है कि इतिहास केवल घटनाओं के सामाजिक, सांस्कृतिक अध्ययन का ही विषय नही रह गया है अपितु वह एक ऐसा सामाजिक विज्ञान बन गया है जिसमें दर्शन को भी खोजा जाने लगा है। इस आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि जैसे–जैसे ज्ञान–विज्ञान का विकास होता जाएगा, इतिहास की विषयगत अवधारणा का स्वरूप भी बदलता जाएगा।

1.3 देश–धर्मगत अवधारणा

इतिहास के प्रति अवधारणा की एक विशेषता यह भी है कि आरम्भ में उसे केवल पश्चिमी विद्वानों से ही सम्बद्ध किया गया था, जबकि भारतीय इतिहासकारों के विषय में यह भ्रान्ति थी कि उनके पास कोई ऐतिहासिक दृष्टिकोण नही है। पौराणिक कथाओं के प्रमाण से उन्हें अत्यधिक काल्पनिक एवं तिथिक्रम–ज्ञानरहित इतिहासकार माना गया था। लोएस डिकिंसन ने तो

यह ज्ञात स्पष्टतः प्रसारित की थी कि हिन्दू इतिहासकार नही थे। उनका समर्थन डॉ0 हीरानन्द शास्त्री एवं विरोध डॉ0 गोविन्दचन्द्र पाण्डे ने किया है। डॉ0 झारखण्डे चौबे ने कहा है कि प्राचीन काल से वर्तमान तक भारतीयों में इतिहास की एक अवधारणा रही है, जिसके अनुसार प्रकृति से प्रभावित तथा दुःखों से विक्षिप्त लोगों के लिये चार आश्रम और पुरूषार्थ के चार साधन नियत किये गये थे ताकि वे जीवन के अंतिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकें। इस तरह भारतीय इतिहास का स्वरूप व्यक्तिवादी है।

1.4 कालगत अवधारणा

इतिहास में समय का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। समय के अनुसार इतिहास की अवधारणा भिन्न–भिन्न रही है, किन्तु उसका स्वरूप उद्देश्यपरक रहा है। भारतीय अवधारणा के अनुसार इतिहास एक निरन्तर चलायमान युग–चक्र है। मानव जीवन इसी चक्र द्वारा नियन्त्रित होता है। प्रत्येक चक्र चार युग में विभक्त है। (कृत, अथवा सत, त्रेता, द्वापर, कलियुग) और ब्रहा द्वारा युग–चक्र की सृष्टि होती है। युग–चक्र निरन्तर चलता रहता है। जब धर्म की अवनति और सधर्म का प्रसार होने लगता है तो ईश्वर अवतार लेकर स्थिति को सामान्य बना देता है। यह अवतारवाद भारतीय इतिहास की अवधारणा है। अवतार को यदि धर्म से अलग कर दें तो ईश्वर को हम साधारण मानव के रूप में पायेगें इसमें कर्म को प्रधान, धर्म को महत्ता कर्म और सब कुछ का अभीष्ट मोक्ष माना गया है। यूनानी रोमन अवधारणा भी भारतीय अवधारणा की तरह अपने लिए युगचक्र सिद्धान्त में मान्यता देती है, उसमें स्वर्णयुग, रजतयुग, कांस्ययुग और लौह युगों में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के परिवर्तन की चक्रात्मक प्रक्रिया चलते रहने को स्वीकृत किया गया।

1.5 विचारगत अवधारणा

इतिहास के प्रति भिन्न–भिन्न लोगो के विचार रहे है। आर.जी. कालिंगवुड ने कहा है कि सम्पूर्ण इतिहास विचारों का होता है। मनुष्य का कार्य विचारपूर्ण होता हैं। उन विचारों का स्वतन्त्र और स्पष्ट अध्ययन करने पर भी हमें इतिहास के प्रति उनकी अवधारणा को समझने में सहायता मिलती है। भारतीय विद्वान ईश्वर, प्रकृति, धर्म–कर्म, मोक्षादि के प्रति निष्ठावान थे। हेसियड ने धातु–चक्र पर इतिहास को विवेचित करते हुए उसका उद्देश्य भी पीढी के लिये अतीत के मानवीय कार्यो को सुरक्षित रखना माना है। हेरोडोटस ने ईश्वर– प्रकृति के नियमों को मानवीय क्रियाओं के सन्दर्भ में लिया और वे इतिहास के जन्मदाता कहलाये। क्रोचे ने घटनाओं पर आधारित सभी इतिहासों को समसामयिक कहा। थ्यूसीडाइडीज ने मनोवैज्ञानिक इतिहास को जन्म दिया जिसमें आदर्शवाद भाग्यवाद को नकारते हुए मानव इच्छा को माना गया था। रोमन इतिहासकार पोलिवियस ने इतिहास के सार्वभौमिक स्वरूप को स्वीकार किया और कहा कि अतीत का वर्तमान में सातत्य ही इतिहास हैं। लिवी ने इतिहास में नैतिकता पर बल दिया। टेसीटस ने अच्छे तथा बुरे तत्वों का प्रतिनिधित्व कहने वाले व्यक्तियों के संघर्ष को प्रस्तुत किया और कहा कि नैतिक क्रान्तियाँ भी सामाजिक तथा राजनैतिक परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप होती है, साथ ही ऐतिहासिक घटनाएँ भी परिवर्तनशील प्रकृति के ऋतु–परिवर्तन की तरह होती है।

1.6 इतिहास की प्रकृति एवं प्रवृत्ति

सामान्यतः यह माना जाता है कि प्रकृति और प्रवृत्ति में कोई अन्तर नहीं है। वर्ण्य विषयों के आधार पर भी यदि हम विवेचना करें तो इतिहास की प्रवृत्ति के विषय में यह कह सकते है। कि उसकी प्रकृति अथवा प्रवृत्ति एक विज्ञान की है, एक कला की है और एक दर्शन की है तो ऐसा कहना कोई हास्यास्पद नहीं होगा। फिर भी शाब्दिक आधार पर कुछ विद्वान प्रकृति

और प्रवृत्ति में अन्तर देखते हैं। अतीत की घटनाओं का अध्ययन–विषय होने के कारण कुछयह कहते है कि इतिहास में घटनाओं की पुनरावृत्ति होती है। ऐसे विद्वान लोग अपने कथन की पुष्टि में युद्व और क्रान्तियों का उदाहरण देते हैं और यह कहते हैं कि युद्व भूतकाल में हुए थे, युद्ध वर्तमान में और भविष्य में भी हो सकते हैं। इसी प्रकार क्रान्तियाँ हुई थी, होती हैं और होगी भी। वास्तव में यदि शब्दिक भावनाओं पर ध्यान दिया जाये तो ऐसा लगेगा कि इतिहास की पुनरावृत्ति अवश्य होती है, किन्तु यह सच नहीं है। यदि उन्ही उदाहरणों को ले तो हम पायेगें कि भूतकाल की तरह वर्तमान अथवा भविष्य में युद्ध हो सकते है, किन्तु उनके कारण और स्वरूप दोनों पहले से भिन्न हो सकते हैं और उसका परिणाम भी पूर्व जैसा नहीं हो सकता। इसी तरह से यदि हम क्रान्ति को ले तो पहले की क्रान्ति का कारण और उसका परिणाम आवश्यक नही कि बाद की क्रान्ति जैसा ही हो। फ्रांस, रूस आदि देशो में हुई क्रान्तियाँ इसके लिये सशक्त उदाहरण है। अतः ये निराधार एवं निर्मूल बाते है कि इतिहास अपने को दुहराता है अपितु सच यह है कि इतिहास में पुनरावत्ति नहीं होती। आधुनिक इतिहास की प्रवृत्ति यह है कि उसमें प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृतियों का दर्शन होता है। यह एक अत्यन्त रूचिकर विषय है। यह अतीत के आलोक में वर्तमान व्यवस्था को समझने और भविष्य की दिशाओं का निर्देश करने की प्रवृत्ति रखती है। धर्म, राजनीति, समाज, संस्कृति, अर्थव्यवस्था आदि सभी इसके ऐतिहासिक दर्शन में अभिरंक्षित हुए है। तथ्य बदलते रहते है व्याख्या बदलती रहती है, और उसी के साथ–साथ इतिहास का स्वरूप भी बदलता रहता है–यह इतिहास की अपनी प्रवृत्ति है। इसकी प्रवृत्ति की सबसे बड़ी विशेषता है कि यह संसार के आध्यात्मिक और भौतिक प्रगति एवं विकास को स्पष्ट रूप से व्यक्त करती है और उस अभिव्यक्ति के माध्यम से एक अप्रत्यक्ष सन्देश भी देती है। उदाहरणार्थ–इतिहास हमें बतलाता है कि कुछ समय पूर्व हमें स्वयं तक का ज्ञान नही था, हम नगनावस्था में वन्य जीवन व्यतीत करते थे। हम सभ्य हुए, सुसंस्कृत हुए, हमारा विकास हुआ, हमने अपनी आवश्यकता की वस्तुओ का

अन्वेषण किया। हमारा चिन्तन विकसित हुआ और हमने ईश्वर की कल्पना की उसके निराकार स्वरूप को साकार बनाया, भौतिक ज्ञान वृद्धि के बल पर अपने ही समान अपने द्वीपों की खोज की सामुदिक यात्राएँ की एवरेस्ट–शिखर पर चढ़े, चन्द्रका तक हो आये, तलवारों को रख दिया और राकेट दागे इत्यदि। स्पष्ट है कि आगे भी हम जो करेंगे, वह सब भी इतिहास बन जायेगा। अतः यह भी इतिहास की एक प्रवृत्ति ही है कि वह हमारे कर्मो का प्रतिफल है। हेगेल ने इतिहास के स्वरूप को सामयिकता युक्त तर्क मानते हुए बतलाया है कि तार्किक प्रक्रिया के द्वन्द्वात्मक और विरोधात्मक होने के कारण अर्थात वाद, प्रतिवाद और सामवाद के क्रम पर आश्रित होने के फलस्वरूप इतिहास की प्रक्रिया इसी प्रकार द्वन्द्वात्मक और विरोधात्मक होती है, जिसे डाइलेक्टिक कहते हैं। हेगल ने इतिहास के स्वरूप को एक बुद्धिसंगत प्रक्रिया के रूप में, किन्तु प्रकृति से भिन्न स्वरूप में स्वीकार किया है और कहा है कि इतिहास का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जिसमें प्रक्रिया रेखावत् चलती हो एवं आवृत्तियों में नवीनता भी पायी जाती हो। जॉन डिनी की मान्यतानुसार इतिहास का स्वरूप निरन्तर परिवर्तनशील और सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार सदैव विकसित होता रहा है। विकासित होने पर जब वह विस्तुत हो जाता है तब अध्ययन की सुविधा के लिये उसके स्वरूप को छोटे–छोटे भागों में बॉटकर ही अध्ययन करने में सुगमता रहती है। इस आशय से वह इहिास के स्वरूप निर्माण में इतिहासकार की भूमि का को महत्वपूर्ण मानते है। आर.जी.कालिंगवुड कहते हैं–इतिहास का स्वरूप ऐसा होना चाहिये कि उसमें सुनिश्चित लक्ष्य एवं दिशा वाले बौद्धिक चिन्तन द्वारा प्रस्तुत विचारों को समाहित किया गया हो, किन्तु प्रत्येक विचार को नही वह केवल विज्ञान अथवा कला नही अपितु, दोनों है। ई.एच. कार ने इतिहास की प्रकृति को अतीत की घटनाओं एवं कारण और परिणाम के पारस्परिक सम्बन्धों को क्रम से प्रस्तुत किये जाने से सम्बन्ध किया है। डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल के अनुसार इतिहास का स्वरूप उसे यथावत् स्वीकार कर लेने से सम्बध न होकर घटनाओं के कारणो

की वैज्ञानिक विधि से खोज से सम्बन्धित होता है। डॉ. रमेशचन्द्र मजूमदार ने इतिहास के स्वरूप को सत्य के अन्वेषण से संबद्ध मानते है। डॉ.डी0डी0 कौशाम्बी के अनुसार–इतिहास का स्वरूप उत्पादन के संसाधनों में उत्तरोत्तर परिवर्तनों के तिथिक्रमानुसार प्रस्तुतिकरण से संबन्ध होता है। आचार्य नरेन्द्र देव की दृष्टि में इतिहास का स्वरूप सत्याचरण एवं सुसंस्कारयुक्त मानव समाज से सबंद्ध है। वह इतिहास के राष्ट्रीय समाजवादी स्वरूप को विशेष आदर देते थे और लोकतंत्र में संघर्ष से भी अनुराग रखते थे। किन्तु पं0 जवाहरलाल नेहरू ने इतिहास के स्वरूप को विश्व इतिहास की एक झलक में ही देखने का यथा सम्भव प्रयास किया था। कतिपय इतिहासकारों एवं विद्वानों द्वारा इतिहास के स्वरूप को जिस प्रकार परिभाषित किया गया है उसकी यदि समीक्षा की जाए तो हम पायेगें कि किसी ने इसके स्वरूप को कहानी एवं सामाजिक विज्ञान जैसा बदलाया है तो किसी ने इसके स्वरूप को ज्ञान, समसामयिक विचार और अतीत वर्तमान के मध्य सेतु जैसा माना है। कुछ न प्रमुखच घटनाओं का संग्रह अथवा संसार का सार्वभौम परिचय कहा है।

1.7 इतिहास की भारतीय अवधारणा

भारतीय इतिहास की अवधारणा एवं चिन्तन परम्परा के विषय में पाश्चात्य विद्वानों का विचार है कि भारत में इतिहास की कोई परम्परा नहीं थी। वे घटनाओं के तिथिक्रम में ध्यान नहीं देते थे। तथ्यों को कल्पित एवं पौराणिक कथाओं के आधार पर प्रस्तुत करते थे। भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के मर्मज्ञ डॉ.गोविन्दचन्द्र पाण्डे ने पाश्चात्य दृष्टिकोण का खण्डन किया है। उनका तर्क है कि भारतीयो ने वर्तमान जीवन को कभी भी नगण्य नहीं माना है। यदि इतिहास कर्म–प्रधान रहा है तो भारतवर्ष सदैव महापुरूषों की कर्मभूमि रहा है। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि भारतीय इतिहास की अवधारणा भारतीय संस्कृति में निहित मूल्यों एवं परम्पराओं के अनुसार रहा है, जिसकी सार्थकता एवं निहितार्थ का मूल्यांकन इसके सम्यक् चिन्तन एवं

मनन के बाद किया जा सकता है। इसलिए भारतीय इतिहास की अपनी अवधारणा है जिसका स्वरूप प्रारम्भ से ही उद्देश्यपरक एवं सार्थक रहा है।

1.8 सारांश

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि इतिहास मानवीय अनुभवों, घटनाओं का क्रमबद्व एवं वैज्ञानिक अध्ययन है। इतिहास की अवधारणा विभिन्न काल एवं परिस्थितियों के अनुसार अलग–अलग रही है। देश एवं काल के अनुसार इतिहास तथा ऐतिहासिक घटनाओं का प्रभाव समाज एवं व्यक्ति पर पड़ता है। प्रत्येक काल की परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप इतिहास की अवधारणा बदलती रही है। इसलिए भारतीय इतिहास की अपनी अवधारणा है जिसका स्वरूप प्रारम्भ से ही उद्देश्यपरक एवं सार्थक रहा है।

1.9 शब्दावली

- **हिस्तोरे**–वह व्यक्ति जिससे आपसी वाद–विवाद के निपटारे की अभ्यर्थना की जाती थी।
- **हिस्टोरिका**–इतिहास के जनक हेरोडोटस की प्रसिद्व कृति

1.10 बोध प्रश्न

1. इतिहास के विषय में विभिन्न अवधारणाओं का वर्णन करे।

   ....

   ....

2. इतिहास के प्रकृति एवं प्रवृत्ति पर प्रकाश डालिए।

   ....

   ....

3. इतिहास मानवीय घटनाओं का संकलन है। इस कथन पर प्रकाश डालिए।

   ....

   ....

.4. इतिहास की भारतीय अवधारणा का वर्णन कीजिए।

   ....

   ....

1.11 सहायक ग्रन्थ

1. पाण्डे, गोविन्द चन्द, इतिहास, स्वरूप एवं सिद्वान्त, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर, 2019

2. चौबे, डॉ. झारखण्डे, इतिहास—दर्शन, विश्वविद्यालय, प्रकाशन, वाराणसी, 2013

3. सिंह, डॉ.परमानन्द, इतिहास—दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 2010

इकाई : 02 – इतिहास चिन्तन की परम्परा का विकास एवं क्षेत्र तथा महत्व

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 इतिहास चिन्तन परम्परा का विकास

2.3 इतिहास चिन्तन की परम्परा के विविध आयाम

2.4 इतिहास चिन्तन की परम्परा के प्रति विद्वानों का दृष्टिकोण

2.5 भारत में इतिहास चिन्तन की परम्परा

2.6 इतिहास क्षेत्र का विस्तार

2.7 इतिहास का महत्व

2.8 सारांश

2.9 शब्दावली

2.10 बोध प्रश्न

2.11 सहायक ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेगे कि –

- इतिहास की परम्परा का काल एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होता रहा है।
- चिन्तन परम्परा के विभिन्न आयामों के विषय में जान सकेगें।

2.1 प्रस्तावना

भारतीय इतिहास चिन्तन परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। चिन्तन की परम्परा का स्वरूप एवं प्रकृति विभिन्न कालों में अलग–अलग रही है। यह परिवर्तन कई आयामों में दृष्टिगत होता है। भारतीय इतिहास चिन्तन की परम्परा के विषय में कुछ लोग यह स्वीकार करते है कि इतिहास–चिन्तन परम्परा का अनुसरण पश्चिम के कतिपय देशों ने किया है। यूनानी सभ्यता को पुरातन मानने वालो का मत है कि वहाँ इसका उदगम बौद्धिक कार्य–व्यापार के महान उद्वेग की एक अभिव्यक्ति के रूप में हुआ था। 'हिस्तोरे' शब्द का अर्थ वह विशेषज्ञ होता था जो वाद–विवाद का निर्णय करता था। हिस्ट्री शब्द का प्रयोग करने वाला प्रथम व्यक्ति हेराडोटस (इतिहास का जनक) था। उसने इस शब्द का आशय खोज (अनुसंधान) माना था। उसने यूनानी इतिहास–चिन्तन की आधारशिला का निर्माण किया था। इतिहास के वैज्ञानिक जनक थ्यूसीडाइडीज ने उस चिन्तन परम्परा को सशक्त एवं मजबूत आधार प्रदान किया और अरस्तू ने उसे दार्शनिक चिन्तन का स्वरूप प्रदान किया। भारतीय चिन्तन परम्परा मूल्यों,परम्पराओं,मानवीय मूल्यों तथा पुरूषार्थ चतुष्टय धर्म,अर्थ,काम तथा मोक्ष के सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित है।

2.2 इतिहास चिन्तन की परम्परा का विकास

मानव का अपने अतीत के प्रति लगाव उसकी स्वभाविक प्रवृत्ति होती है। प्राचीन काल के लोगों में अतीत के प्रति एक जीवंत चेतना थी। यद्यपि यह एक सांसारिक, मानवीय, ऐतिहासिक अतीत बोध के रूप में विकसित नहीं हो पाई। इतिहास की एक वाचिक और मौखिक परम्परा है। जैसे की गाथा और नाराशंसी के रूप में दिखता है। ऋग्वैदिक काल में भी एक अस्पष्ट और अव्यवस्थित रूप में अस्तित्व में थी। उत्तरवैदिक काल और उसके बाद अर्द्ध ऐतिहासिक घटनाओं के आख्यान, इतिवृत्त, वंश और वंशानुचरित, पुराण और इतिहास जैसे अन्यान्य रूपों का आर्विभाव हुआ। यदा–कदा गाथा और नाराशांसी को परस्पर संयोजित करके आख्यान में समाविष्ट कर दिया जाता था जिसका सरल अर्थ ब्राह्मण साहित्य में वार्णित देवासुर और परिप्लावनी जैसे ऐतिहासिक वृत्तांत थे। इतिवृत्त जिसका अर्थ घटना है, पूर्ववर्ती काल के मनुष्यों तथा वस्तुओं का पारंपरिक विवरण है। वंश या शासकों की वंशावलियों और पुरोहितों के वंशवृक्ष प्राचीन जनश्रुति की एक अन्य कोटि है। इस प्रकार की कतिपय घटनाओं को जब संकलित और व्यवस्थित किया गया तो वे वंशानुचरित के रूप में विकसित हुए जिनसे उपलब्ध विवरणों के आधार पर परवर्ती काल में पुराणों के राजनैतिक अंशों की रचना हुई। मिथ, दंतकथा और इतिहास के इस भ्रामक संग्रह को धर्मतन्त्रीय और मिथकीय दोनो तरह का इतिहास कहा जा सकता है।

2.3 इतिहास चिन्तन की परम्परा के विविध आयाम

इतिहास चिन्तन परम्परा के क्षेत्र के विकास में विभिन्न आयामों एवं पक्षों का योगदान रहा है। धार्मिक आन्दोलन के अन्तर्गत यहूदी ईसाई धर्म के विकास ने इतिहासकारों को धार्मिक परिवेश में चिन्तन हेतु विवश किया इस परम्परा में इतिहास को मुख्यतः धार्मिक विषयों को परिभाषित करने वाला माना गया था और उसे क्रमशः करके ईश्वर के समीप पहुँचा दिया गया था।

विशिष्ट घटनाएँ उसके साथ जोड़ दी गयी और कार्य–कारण परिणाम के अन्तर्गत उनका अध्ययन आरम्भ हो गया। 16वीं सदी को वैज्ञानिक युग भी कहा गया है। उस समय साक्ष्य तथा अनुभवों को ज्ञान का प्रामाणिक आधार माना गया था। इतिहासकार सत्ता और परम्परा का त्यागकर तथ्यों से संघर्ष करने को प्रस्तुत थे। साहित्य भण्डार भी पर्याप्त था इसलिये गवेषणा के लिये सामग्री की कमी नयी। उसको इतिहासकारों ने मूल्यांकन के सिद्धान्तो के आधार पर परिशुद्ध करके सम्पादित करना आरम्भ किया। वर्जिल तथा बेकन ने उसमें विशेष योगदान किया। इस ऐतिहासिक जागृति का रहस्य यूरोपीय संस्कृति की अन्तरात्मा में एक नवीन काल–चेतना का उन्मीलन था।

17वीं एवं 18वीं सदी में वैज्ञानिक अनुसंधान कार्य आरम्भ हुआ और वैज्ञानिक बुद्धिवाद का मूल–संम्बर्द्धन हुआ। 17वीं सदी के वैज्ञानिक अनुसंधान ने बौद्धिक परिवर्तन की दिशाओं को निर्धारित किया। गैलीलियों तथा न्यूटन के विचारों की क्रान्ति को गति प्रदान की। 18वीं सदी में इतिहास चिन्तन के स्थान पर आलोचना को महत्व दिया गया। बुद्धिमान की शक्ति बढ़ने लगी थी। लोग परम्परागत विचारों को छोड़कर सत्य की खोज में जुट गये। सत्य ज्ञान के प्रति उनमें आकर्षण जागृत हुआ और इस तरह यूरोप में वैज्ञानिक बुद्धिवाद का साम्राज्य स्थापित हुआ।

2.4 इतिहास चिन्तन के प्रति विद्वानों का दृष्टिकोण

इतिहास दर्शन के जन्मदाता वाल्टेयर ने बुद्धिवादी विचारधारा को विकसित करने में अपना विशेष योगदान किया था। उन्होने मनुष्य और प्रकृति दोनों को एक साथ लेकर अध्ययन किया था। गार्डिनर के अनुसार, एक सुसम्बद्ध सार्वभौमिक इतिहास लिखने की अपेक्षा उसने यह स्पष्ट करने की चेष्टा की कि एशिया भी यूरोप की ही भाँति सभ्य था। उसके अपने चिन्तन का मुख्य तत्व मनुष्य तथा प्रकृति के प्रति व्यापक जिज्ञासा, ज्ञान के प्रति समीक्षात्मक तथा तर्कशील दृष्टिकोण और उपदेशात्मक उद्देश्य रहा है।

हीगेल ने ऐतिहासिक व्यक्तियों के सन्दर्भ में बुद्धि की चतुराई की अवधारणा को स्थापित किया जो मानव अभिप्राय के रहते हुए कार्य करती है। हीगेल के अनुसार इतिहास विवेकपूर्ण अर्थपूर्ण तथा बोधगम्य है। इतिहास की गति इच्छात्मक है और उसका लक्ष्य स्वतन्त्रता की प्राप्ति है। इतिहास की द्वन्द्वात्मकता गति के बारे में हेगेल का मत है कि राष्ट्र तथा संस्कृति का उत्थान, पतन और अन्त होता है और उसी की पृष्ठभूमि पर नवीन राष्ट्र तथा संस्कृति का उत्थान, पतन और अन्त होता है। प्रत्येक राष्ट्र अथवा संस्कृति अपने विरोधी तत्व को जन्म देते हैं। इन दोनों के पारस्परिक संघर्ष से एक का अन्त और दूसरे का उदय होता है। यही इतिहास की द्वन्द्वात्मक गति है, जिसकी गवेषणा का एकमात्र श्रेय हीगेल को दिया जाता है।

2.5 भारत में इतिहास चिन्तन की परम्परा

भारतीय इतिहास चिन्तन का मूल आधार वस्तुतः धर्म ही था। पाश्चात्य विचारको की तरह यहाँ के विद्वानों ने भी अपनी चिन्तन धारा में परिवर्तन किया। आज इतिहास में दर्शन एवं विज्ञान के साथ–साथ अलगाववाद, क्षेत्रवाद, राष्ट्रवाद, आतंकवाद, विश्वयुद्ध, परमाणु युद्ध आदि से निवृत्ति एवं विश्व शान्ति की स्थापना के अभिप्राय से इतिहास के सार्वभौम स्वरूप को परिवर्तित किया जाने लगा है। भारत में यूनान, एशिया, यूरोप, अमेरीका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, रूस, चीन, जापान, आदि देशो का भी इतिहास पढ़ाया जाता है। डॉ. ए.के कुमारस्वामी, डॉ. के.पी. जायसवाल, डा. आर.सी. मजूमदार डॉ. डी.डी. कौशाम्बी, आचार्य नरेन्द्रदेव, जवाहर लाल नेहरू, डॉ. राम मनोहर लोहिया, डॉ. यदुनाथ सरकार जैसे भारतीय इतिहासकारों ने इतिहास के अध्ययन–अध्यापन को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किया तथा सम्पूर्ण विश्व के लिये सुलभ कराने का प्रयास भी किया है जो भारतीय इतिहास की चिन्तन परम्परा का ही बोध कराता है। यह चिन्तन कितना विकसित होगा, निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता, परन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि

भारतीय इतिहास–चिन्तन की परम्परा सदैव मूल्यपरक, मौलिकता से युक्त के साथ विकासपरक रही है।

2.6 इतिहास क्षेत्र का विस्तार

समाज के विकास के साथ इतिहास के क्षेत्र में भी निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। इसके तीन महत्वूपर्ण पहलू हैं। प्रथम, उन घटनाओं का संकलन जो घटित हुई हैं। द्वितीय ये घटनाएँ क्यों और कब घटित हुई है और तृतीय ये घटनाएँ कैसे घटित हुई है। इतिहासकारों ने विभिन्न घटनाओं का उल्लेख केवल उनके वर्णन के द्वारा नहीं किया है अपितु आलोचनात्मक पद्धति को अपनाया है। राजवंशो के उत्थान–पतन के साथ–साथ उन्होने शासकों की जीवन–शैली एवं उपलब्धियों की भी व्याख्या करते हुए सामाजिक पहलुओ, रीति–रिवाजों और परम्पराओं का भी उल्लेख किया है। आज इतिहासकार सामान्य व्यक्तियों का वर्णन भी करते है और इतिहास ने स्वयं अपना स्तर स्थापित कर लिया है। वस्तुतः इतिहाकारों ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उत्तरोत्तर विस्तार होता जा रहा हैं इतिहास के जनक हेरोडोटस ने अतीत के मानवीय कार्यो एवं उपलब्धियों को कहानी के रूप में वर्णित किया है। मध्य युग में धर्म को महत्व दिये जाने के कारण इतिहास के क्षेत्र में धार्मिक मान्यताओं को भी स्थान दिया जाने लगा। प्रो. ई.एच.कार ने इस सन्दर्भ में उल्लेख किया है कि इतिहास विज्ञान के समान ही विस्तृत है जिसमें तथ्यों का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है। मानवीय जीवन के विभिन्न क्रियाकलापों को इतिहास के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाने के कारण भी उसके क्षेत्र का विस्तार हुआ है। वस्तुतः इतिहासकार का मुख्य आकर्षण मानव की उपलब्धियों का अंकन करना है चाहे वे विज्ञान, तकनीकी अथवा आविष्कार से सम्बन्धित हों। विभिन्न वंशो की भूमिका का निर्धारण करने के साथ–साथ अब इतिहासकार कला, विज्ञान और आर्थिक पहलुओं का भी वर्णन में ध्यान देते हैं। यही कारण है कि मानव जीवन का कोई पहलू अछूता न रहे जिसके कारण इतिहास के क्षेत्र में अत्यधिक विस्तार हुआ है। कुछ

विद्वानों की यह धारणा है कि इतिहासकार दो प्रकार से इतिहास को प्रस्तुत कर रहे हैं। प्रथम वे घटना के सम्बन्ध में तथ्यों को एकत्रित करते है और द्वितीय वे घटना की व्याख्या और वर्णन करते है। प्रथम प्रकार से तात्पर्य ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठा से है और द्वितीय का आधार विषय–वस्तु के नाम से जाना जाता है। एम.जी.ट्रेवेलियन का मत है कि इतिहासकार से तीन कार्यो की अपेक्षा की जाती है कि उसमें वैज्ञानिक काल्पनिक और साहित्यिक पुट होना चाहिए। ऐतिहासिक दृष्टि से प्रकृति का अध्ययन भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि बडे–बड़े पर्वतों, नदियों और भौगोलिक वातावरण भी मानव के उत्थान को प्रभावित करता हैं। अतः इतिहास–लेखन के समय इन तथ्यों को भी नकारा नहीं जा सकता। नवीन खोजों से उपलब्ध प्राचीन सिक्कों और अभिलेखों के कारण भी इतिहास के क्षेत्र में पर्याप्त विस्तार हुआ। 19वीं शताब्दी में जीव विज्ञान और पुरातत्व विज्ञान ने भी प्राचीन इतिहास के ज्ञान में वृद्धि की है क्योंकि इनसे प्राचीन मानव की जीवन–शैली का विस्तृत ज्ञान उपलब्ध हुआ है। संसार के विभिन्न भागों में की गयी खुदाई एवं पुरातात्विक गतिविधियाँ इतिहास क्षेत्र के विस्तार में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई है। अब इतिहास का स्वरूप विश्वप्यापी हो गया है। पूर्व में इतिहास केवल राजनीतिक सामाजिक और सांस्कृतिक इकाइयों में विभाजित था और ये इकाइयाँ अपने आपको श्रेष्ठ समझती थी। चूँकि भारत चीन और ईरान की सभ्यताएँ अपने आपको औरों की तुलना में उच्च मानती थीं परन्तु विश्व के विभिन्न देशों के मध्य संचार साधनों के विकास के कारण अन्य देश भी एक–दूसरे के समीप आ गये थे। वे एक–दूसरे को जानते है तथा उनमें एकता की भावना का विकास हुआ है जिसके कारण विश्वत्यापी स्तर पर एकात्मक संस्कृति का स्वरूप ग्रहण कर लिया है। प्रो. एल्टन ने इस सन्दर्भ में लिखा है, ''अच्छा ऐतिहासिक लेखन ही विश्व इतिहास की दृष्टि से उचित है क्योंकि चाहे वह उसके किसी भाग का वर्णन करे वह विश्व व्यापकता का स्मरण करता है।''वर्तमान काल में व्यवस्थित ढंग से तथ्यों के संकलन तथा उनके मूल्यांकन के लिए आलोचनात्मक दृष्टिकोण को अपनाना होता है। 19वीं

शताब्दी का इतिहास केवल राजनीतिक घटनाओं के अध्ययन तक सीमित था परन्तु अब इतिहास के अन्तर्गत सामाजिक, नैतिक, आर्थिक और लोगों के साहित्यिक जीवन का भी मूल्यांकन किया जाता है। अन्ततः सम्पूर्ण दृष्टिकोण परिवर्तित होकर जन साधारण के समीप केन्द्रित हो गया है। सापेक्षवाद की नवीन धारण के कारण इतिहास के क्षेत्र में अत्यधिक विस्तार हो गया हैं।

2.7 इतिहास का महत्व

कुछ विद्वानों की यह धारणा है कि इतिहास का अध्ययन उचित नही हैं क्योंकि वे अनुभव करते हैं कि व्यक्ति को अपने वर्तमान में सन्तुष्ट रहना चाहिए और मृतक अतीत के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने में समय को नष्ट नही करना चाहिए। इस सन्दर्भ में हेनरी फोर्ड ने भी लिखा है, इतिहास एक लकड़ी का सन्दूक है। किन्तु हीगल यह उल्लेख करता है कि इतिहास से जो एकमात्र सबक सीखते है वह यह है कि इतिहास के पास देने के लिए कोई सबक नही है किन्तु इस दृष्टिकोण को विद्वानों ने अधिक मान्यता प्रदान नही की है। वस्तुत भूतकाल का भी उतना ही महत्व है जितना कि वर्तमान काल का बिना अपने अतीत को जाने हमारी स्थिति एक मूक पशु के समान होगी क्योंकि अपने समस्याएँ जो आज हमें अग्नि करती हैं उनके कारण अतीत में ही निहित हैं। अतः अतीत के अध्ययन का महत्व कदाचित वर्तमान से कम नही है। एक प्रसिद्ध विद्वान ने भी इस सन्दर्भ में यह उल्लेख किया है कि एक मनोचिकित्सक भी अतीत की जानकारी को प्राप्त किये बिना रोग मिटाने हेतु कोई दवा नही देता है। उसके लिए अपने रोगी के पूर्व इतिहास की जानकारी अत्यन्त आवश्यक होती है। क्योंकि व्यक्तित्व ही उसके अनुभवों को दर्शाता है। इसी प्रकार वर्तमान में राष्ट्रों का स्वरूप और उसकी संस्थाओं के द्वारा ही हम उसकी पृष्ठभूमि का निर्माण करते हैं। इतिहास के अध्ययन का इसलिए भी अत्यधिक महत्व है क्योंकि वह हमें बौद्धिक सन्तुष्टि प्रदान करता है। इस सन्दर्भ में प्रो. एल्टन की भी धारणा है 'अतीत के अध्ययन से

हमें अपने बौद्धिक विकास हेतु प्रचुर सामग्री उपलब्ध होती है जो भावनात्मक सन्तुष्टि प्रदान करती है।

ऐतिहासिक ज्ञान हमें वर्तमान को भली प्रकार जानने की क्षमता प्रदान करता है और भविष्य के सम्बन्ध में दिशा–निर्देश देता है। यह मानव के अनुभवों के क्षेत्र में वृद्वि करता है और उनके परस्पर मानवीय व्यवाहर सम्बन्धों का भी निर्धारत करता है। साथ ही इतिहास मानव पर पड़ने वाले प्रभाव के कारणों एवं दशाओं की भी जानकारी देता हैं इतिहास मानव पर पड़ने वाले प्रभाव के कारणों एवं दशाओं की भी जानकारी देता है। इतिहास के अध्ययन से व्यक्ति की बुद्धि एवं चिन्तन के विकसित होने से तर्क शक्ति का भी उत्थान होता है। यह न केवल व्यक्ति को सत्य के अन्वेषण के लिए प्रेरित करता है अपितु अतीत के पुनर्निर्माण में भी सहायता प्रदान करता है। इतिहास के अध्ययन के महत्व पर बल देते हुए काालिंगवुड ने भी लिखा है कि ''इतिहास का अध्ययन मानव जीवन के लिए उपयोगी है क्योंकि परिवर्तन की लय स्वयं को दोहराती रहती है क्योंकि उसी प्रकार की घटनाएँ और समान परिणाम अवसर दृष्टिगोचर होते है। यह न केवल घटित होने वाली घटनाओं की और संकेत करता है अपितु उन संकटों से भी अवगत कराता है जो आने की सम्भावना होती है। सर टॉमस मूर की भी इतिहास के महत्व के सन्दर्भ में यह धारणा है कि इतिहास के कुछ पृष्ठों का अध्ययन मानव मस्तिष्क को इतनी गहनता, सहजता से प्रदान करता है जितनी कि वह आध्यत्मिक विषयों पर प्रकाशित अनेक ग्रन्थो से भी प्राप्त नहीं कर सकता है। इसी प्रकार लेके ने भी इस सन्दर्भ में लिखा है कि वह जिसने सच्चे चरित्र को समझना सीख लिया है तथा आने वाले समय की प्रवृत्ति को जान लिया है तो वह स्व्यं को अनुमानित करने में गलती नहीं करता है। वस्तुतः इतिहास हमें निम्नलिखित पहलुओं की विराट जानकारी में सहायता प्रदान करता है–यह हमें उन प्राकृतिक नियमों की जानकारी देता है जिस पर मानवीय आधारित है।

2.8 सारांश

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भारतीय परम्परा में चिन्तन का अत्यन्त ही सारगर्भित तथा उल्लेखनीय योगदान रहा है। भारतीय चिन्तन परम्परा का सूत्रपात भारत की ऋषि–मुनि की चिन्तन परम्परा में दृष्टिगत होता है। क्योकि भारतीय चिन्तन परम्परा व्यष्टि से समष्टि के कल्याण पर केन्द्रित है। यही भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं चिन्तन पराम्परा की विशिष्टता है।

2.9 शब्दावली

हिस्तोरे' का अर्थ वह विशेषज्ञ होता था, जो वाद–विवाद का निर्णय करता था।

2.10 बोध प्रश्न

1. भारतीय चिन्तन परम्परा के विषय में वर्णन करें।

   ....

   ....

   .भारतीय चिन्तन परम्परा के विभिन्न आयामों का वर्णन करें।

   ....

   ....

   भारतीय चिन्तन परम्परा में इतिहास के महत्व का वर्णन करें।

   ....

   ....

2.11 सहायक ग्रन्थ

1. पाण्डे, गोविन्द चन्द, इतिहास, स्वरूप एवं सिद्वान्त, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर, 2019

2. चौबे, डॉ. झारखण्डे, इतिहास–दर्शन, विश्वविद्यालय, प्रकाशन, वाराणसी, 2013

3. सिंह, डॉ.परमानन्द, इतिहास–दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 2010

इकाई : 03 – इतिहास के स्रोतः प्राथमिक एवं द्वितीयक

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 प्राथमिक स्रोत

3.2.1 सामयिकी ग्रन्थ

3.2.2 शासकीय दस्तावेज

3.2.3 गोपनीय प्रतिवेदन

3.2.4 सार्वजनिक प्रतिवेदन

3.2.5 जनमत संग्रह

3.2.6 प्रश्नावली

3.2.7 साहित्य

3.2.8 लोकगीत तथा लोकोक्तियाँ

3.3 द्वितीयक स्रोत

3.4 सारांश

3.5 शब्दावली

3.6 बोध प्रश्न

3.7 सहायक ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेंगे–

- इतिहास के प्राथमिक स्रोत के विभिन्न पक्षों के विषय में।
- इतिहास के प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोत के अन्तर के विषय में।

3.1 प्रस्तावना

इतिहास में स्रोतों की सर्वाधिक महत्ता तथा विश्वसनीयता होती है। इसके आधार पर अतीत की संरचना होती है। इतिहास में प्रत्येक स्रोत की अपनी–अपनी महत्ता एवं उपयोगिता होती है। ऐतिहासिक रूप से स्रोतों को दो भागों में विभाजित किया जाता हैं–प्राथमिक एवं द्वितीयक। इतिहासकार के लिए दोनों स्रोत महत्वपूर्ण होता है। लेकिन अध्येता को द्वितीयक स्रोतों का भी अध्ययन करना चाहिए। द्वितीयक स्रोत प्रधानतः प्राथमिक स्रोत पर आधारित होता है। इतिहास मानवीय अनुभवों एवं उपलब्धियों का विवरण प्रस्तुत करता है। इतिहास न केवल अतीत की घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करता बल्कि विभिन्न के आधार पर मानव को भविष्य के लिए मार्गदर्शन भी प्रदान करता है। इतिहास के विभिन्न स्रोतों के विभिन्न वर्गो में विभाजित किया गया है। यह स्रोत विभिन्न प्रकार की सूचनाएं प्रदान करते है।

3.2 प्राथमिक स्रोत

3.2.1 सामयिकी ग्रन्थ

समसामयिक ग्रन्थ को प्राथमिक स्रोत के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है। समकालीन ग्रन्थ को एक महत्वपूर्ण अभिलेख के रूप में मान्यता प्राप्त है। इस प्रकार के ग्रन्थ में सम्बन्धित व्यक्ति को अपने कार्य को पूर्ण करने के लिए निर्देश दिये जाते है। इसमें अनुंदेश, अभिलेख, युद्व भूमि से सम्बन्धित आदेश आदि आदेश आते है। इसमें आशुलेखन एवं ध्वनिलेखन को

महत्वपूर्ण माना जाता है। व्यापार एवं कानून से सम्बन्धित हुण्डी, विधेयक, आदेश, रेहन, फर्म आदि के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। व्यक्ति अपने उपयोग के लिए नोटबुक, स्मरण पत्र आदि रखते है। इसको ऐतिहासिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है।

3.2.2 शासकीय दस्तावेज

शासकीय दस्तावेज को प्राथमिक स्रोत के अन्तर्गत माना जाता है। इसे इतिहासकार के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है। इससे विभिन्न कार्यक्रमों, गतिविधियों के साथ–साथ अनेक सरकारी नीतियों एवं योजनाओं के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकते है। सरकारी दस्तावेजों में विभिन्न निकायों, कर प्रणाली, जनगणना के आकड़े, वित्तीय प्रावधानों, आर्थिक वैज्ञानिक तथा जनांकीय आदि के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते है।

3.2.3 गोपनीय प्रतिवेदन

यह प्रतिवेदन सामन्य जन के लिए नही होती है। यह सैन्य एवं राजनैयिक संवाद तथा संस्मरण तथा व्यक्गित पत्रों के रूप में होती है। व्यक्तिगत पत्रों को इतिहास के लिए उपयोगी माना जाता है। पत्र में भी किसी परिवार या व्यक्ति से सम्बन्धित बातों का विवरण प्राप्त होता है। इसको ऐतिहाासिक स्रोत के रूप में प्रयुक्त करने से पूर्व उनकी सत्यता की जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है।

3.2.4 सार्वजनिक प्रतिवेदन

सार्वजनिक प्रतिवेदन जन सामान्य के लिए होती है। प्रायः तीन प्रकार के सार्वजनिक प्रतिवेदन होते है–1.समाचार पत्र और विज्ञाप्ति समाचार पत्र की रिर्पोट तथा प्रेषण की अधिक विश्वसनीयता उस एजेन्सी पर निर्भर करता है जो उसे अन्तिम रूप से प्रकाशित करता है। कभी–कभी किसी सच्ची घटना का विवरण कम विश्वसनीय समाचार–पत्र में प्रकाशित हो जाता है।

पहले विशेष संवाददाताओं की नियुक्ति नही होती थी। समाचार–पत्र एक दूसरे समाचार–पत्र की नकल किया करते थे। संस्मरण तथा आत्कथाएं दूसरी प्रकार के सार्वजनिक प्रतिवेदन है। संस्मरण कम विश्वसनीय होते है। विश्व इतिहास की अनेक घटनाओं का विवरण महत्वपूर्ण है। तृतीय प्रकार किसी व्यापारी घराने का इतिहास सार्वजनिक प्रतिवेदन के क्षेत्र में आता है। इस प्रकार सार्वजनिक प्रतिवेदनों के सम्यक विवरण के आधार पर इतिहास का निरूपण किया जा सकता है।

3.2.5 जनमत संग्रह

जनमत संग्रह को प्राथमिक स्रोत के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है। इतिहासकार के लिए जनमत अत्यन्त महत्वपूर्ण घटक है। जनमत की अभिव्यक्ति विभिन्न माध्यमों जैसे–भाषणों, पुस्तिकाओं आदि के रूप में होती है।

3.2.6 प्रश्नावली

प्रश्नावली को भी प्राथमिक स्रोत के रूप में मान्यता प्राप्त है। इस प्रणाली में किसी भी विषय पर जन सामान्य की विचार की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। यह प्रश्नकर्ता एवं उत्तर देने वाले के बीच गोपनीय सम्बन्ध होने चाहिए।

3.2.7 साहित्य

साहित्य को भी एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्रोत के रूप में मान्यता दी जा सकती है। इसके माध्यम से इतिहासकार स्थानीय स्थितियो, परम्पराओं, रीति–रिवाजों आदि के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकता है। साहित्य समाज का दर्पण होता है। इसके अन्तर्गत समाज के विविध पक्षों का सम्यक विवरण प्राप्त होता है। अनेक इतिहासकारों का मत है कि इतिहासकार को समकालीन साहित्य पर आश्रित नहीं होना चाहिए। उसे अनेक शासकीय

अभिलेखों की सहायता लेनी चाहिए। इतिकासकार को तत्कालीन साहित्य की उपेक्षा नही करनी चाहिए। उसका अध्ययन अत्यन्त सावधानीपूर्वक करनी चाहिए।

3.2.8 लोकगीत तथा लोकोक्तियाँ

लोकगीत भारतीय परम्परा का एक अंग है। इसमें किसी नायक की कहानियों का आख्यान होता हैं जो ऐतिहासिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण स्रोत होता है। इस प्रकार के लोकगीत में किसी नायक के वीरोचित लक्षणों का आख्यान होता है। इससे किसी समाज में प्रचलित रीति–रिवाजों, परम्पराओं एवं अनेक अंध–विश्वासों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। भारत में आल्हा–उदल का आख्यान लोकगीतों की श्रेणी में आता है। लोकगीतों का सही उपयोग करने से पहले इतिहासकार को उस काल विशेष का इतिहास का गहन अध्ययन करना चाहिए। उसे इतिहास एवं आख्यान में अन्तर समझ में आना चाहिए। लोकोक्तियों से महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इतिहासकार को सम्यक प्रकार से परम्पराओं एवं रीति–रिवाजों का गहन अध्ययन होना चाहिए।

3.3 द्वितीयक स्रोत

द्वितीयक स्रोतों की सम्यक जानकारी प्राथमिक स्रोतों के सम्यक एवं सही उपयोग करने के बाद ही सम्भव है। इसके बाद ही समकालीन ग्रन्थों को सही स्थान पर रखा जा सकता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि द्वितीयक स्रोत का भी अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है।

3.4 सारांश

इतिहास में स्रोतों की सर्वाधिक महत्ता तथा विश्वसनीयता होती है। इसके आधार पर अतीत की संरचना होती है। इतिहास में प्रत्येक स्रोत की अपनी–अपनी महत्ता एवं उपयोगिता होती है। ऐतिहासिक रूप से स्रोतों को दो भागों में विभाजित किया जाता हैं–प्राथमिक एवं द्वितीयक। इतिहासकार के लिए दोनों स्रोत महत्वपूर्ण होता है। लेकिन अध्येता को द्वितीयक स्रोतों का भी अध्ययन करना चाहिए। द्वितीयक स्रोत प्रधानतः प्राथमिक स्रोत पर आधारित होता है।

3.5 शब्दावली

- **लोकगीत** – किसी नायक की कहानियों का आख्यान

3.6 बोध प्रश्न

1. इतिहास के प्राथमिक स्रोतों पर टिप्पणी लिखिए।

   ....

   ....

   .इतिहास के स्रोतों की महत्ता पर एक निबन्ध लिखिए।

   ....

   ....

3.7 सहायक ग्रन्थ

1. इतिहास लेख एक पाठ्य पुस्तक,ई.श्रीधरन,ओरियन्ट ब्लैकस्वॉन,नई दिल्ली, 2011
2. इतिहास दर्शन ,डा.परमानन्द सिंह,मोतीलाल बनारसीदास,वाराणसी, 2010
3. इतिहास–दर्शन, कौलेश्वर राय,किताब महल एजेन्सीज,इलाहाबाद, 2005

इकाई : 04 – इतिहास के साहित्यिक एवं गैर–साहित्यिक स्रोत

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 प्राचीन भारतीय इतिहास में स्रोतो का महत्व

4.3 धार्मिक एवं धार्मिकेत्तर साहित्य

- 4.3.1 वेद
- 4.3.2 वेदांग
- 4.3.3 ब्राह्मण ग्रन्थ
- 4.3.4 आरण्यक
- 4.3.5 रामायण एवं महाभारत
- 4.3.6 पुराण
- 4.3.7 बौद्व साहित्य
- 4.3.8 जैन साहित्य
- 4.3.9 ऐतिहाासिक ग्रन्थ

4.4 इतिहास के गैर–साहित्यिक स्रोत

- 4.4.1 अभिलेख
- 4.4.2 मुद्राएँ

4.4.3 स्मारक

4.4.4 मुहरें

4.5 विदेशी यात्रियों का विवरण

4.51. यूनानी इतिहास लेखक

4.5.2 चीनी इतिहास लेखक

4.5.3 मुस्लिम इतिहास लेखक

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 बोध प्रश्न

4.0 उद्‌देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेंगे–

- इतिहास जानने के विभिन्न प्रकार के स्रोतों के विषय में।
- इतिहास लेखन के विभिन्न आयामों के विषय में।
- इतिहास के विषय में विदेशी यात्रियों के विवरण के विषय में।

4.1 प्रस्तावना

अतीत काल में घटित घटनाओं का विवरण इतिहास की विषयवस्तु होती है। प्राचीन भारतीय इतिहास पर प्रकाश डालने वाले विवरण विभिन्न रूपों में प्राप्त होते है। प्राचीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पर व्यवस्थित एवं क्रमबद्व अध्ययन का कार्य पाश्चात्य इतिहासकारों के द्वारा किया गया है। भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास अत्यन्त गौरवपूर्ण रहा है। दुर्भाग्यवश हम प्राचीन इतिहास को सामग्री के अभाव में पूर्णतः पुनर्निर्मित करने में अक्षम अनुभव करते हैं। इसके अतिरिक्त जिस प्रकार के इतिहास लेखक यूनान, रोम आदि देशो में हुए हैं। हमारे यहाँ उनका सदा अभाव रहा है। वास्तव में प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोत बहुतायत में हैं। इनका अगर उचित रूप से वर्गीकरण कर दिया जाए तो प्राचीन भारतीय इतिहास को समझने में अति सुविधा होगी। भारतीय विद्वानों ने गहन अध्ययन के पश्चात् इन एकत्रित स्त्रोतों का वर्गीकरण किया है और इन स्रोतो के आधार पर भारतीय इतिहास को क्रमबद्ध तरीके से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। ऐतिहासिक स्रोतो को मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा जाता है–प्रधान (Primary) और गौण (Secondary) प्रधान स्रोतो में साक्षात के साक्ष्य, मौलिक दस्तावेज आदि हैं। इतिहासकार बिखरे हुए प्रधान स्रोतो को इकठ्ठा कर उन्हें गौण स्त्रोत बना देता है। अधिक महत्व प्रधान स्रोतो को दिया जाता है। दूसरी ओर, गौण उस व्यक्ति का साक्ष्य है जो घटना के समय मौजूद नहीं था। दोनों के अन्तर को

बतलातें हुए प्रो. मार्विक ने कहा है, ''प्रधान स्रोत अप्रकाशित स्त्रोत, है जो कुशल इतिहासकार के लिए अधिक महत्वपूर्ण होते हैं, गौण साधन प्रकाशित पुस्तके, निबन्ध आदि हैं।'' विद्वानों द्वारा वर्णित इन प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोतों को मूल रूप से निम्न भागो में बाँटा जा सकता है।

(1)पुरातात्विक स्रोत (2) साहित्यिक स्रोत

4.2 प्राचीन भारतीय इतिहास में स्रोतो का महत्व

प्राचीन भारतीय इतिहास के पुनिर्माण में स्रोतो का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। इतिहासकार स्रोतो के आधार पर इतिहास की व्याख्या कर समाज की यथार्थता का प्रस्ततीकरण करता है। स्रोतो का विभाजन निम्नलिखित प्रकार है। साहित्यिक स्रोत–साहित्यिक स्रोत को धार्मिक साहित्य तथा धार्मिकत्तेर साहित्य के अन्तर्गत विभाजित किया जाता है।

4.3 धार्मिक एवं धार्मिकेत्तर साहित्य

साहित्यिक स्रोतो के अन्तर्गत प्राचीन धार्मिक साहित्य के अर्न्तगत वैदिक एवं वैदिकोत्तर साहित्य यथा बौद्ध एवं जैन साहित्य आदि आते हैं। ये सम्पूर्ण साहित्य प्राचीन भारतीय इतिहास के विषय में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। धार्मिक साहित्य के अन्तर्गत वेद, वेदांग, ब्राहाण, आरण्यक, रामायण, महाभारत तथा पुराण आदि आते हैं। ये धार्मिक साहित्य प्राचीन भारतीय इतिहास के विषय में अनेक महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं।

4.3.1 वेद

वेद का अर्थ जानना से है। इनकी संख्या चार है–ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद। वेदों में ऋग्वेद सर्वाधिक प्राचीन है। इस ग्रन्थ से प्राचीन आर्यो के सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक जीवन के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

4.3.2 वेदांग

इनकी रचना वैदिक काल के अन्त में हुई। ये वेदों के ही अंग हैं। इनकी संख्या 6 है। ये वेदांग हैं–शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त छंद और ज्योतिष।

4.3.3 ब्राहाण ग्रन्थ

ऋषियों द्वारा वेदों की गद्य में की गई सरल व्याख्या को ब्राहाण ग्रन्थ कहा जाता है। प्रत्येक वेद के अपने ब्राहाण ग्रन्थ हैं। कौषीतकी तथा एतरेय ऋग्वेद के ब्राहाण ग्रन्थ हैं। तैतरीय, कृष्ण यजुर्वेद का शतपथ, शुक्ल यजुर्वेद का ताण्डव पंचविश और जैमनीय सामवेद का तथा गोपध अथर्ववेद का ब्राहाण ग्रन्थ है। इन ग्रन्थो से तत्कालीन लोगों की सामाजिक राजनीतिक तथा धार्मिक जीवन की विशद जानकारी प्राप्त होती है।

4.3.4 आरण्यक

इनमें आत्मा, मृत्यु तथा जीवन संबंधी विषयों का वर्णन किया गया है। चूॅकि इनका पठन–पाठन वानप्रस्थी, मुनि तथा वनवासियों द्वारा वन में (जिसका अर्थ अरण्य होता है) किया जाता है। इसलिए इन ग्रन्थों को आरण्यक के नाम से जाना जाता है।

4.3.5 रामायण तथा महाभारत

महर्षि वाल्मीकि द्वारा लिखित रामायण तथा वेद व्यास द्वारा लिखित महाभारत दो प्रसिद्ध महाकाव्य हैं जो सम्भवतः ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित हैं परन्तु इन महाकाव्यों का रचनाकाल निश्चितता को लेकर मतभेद है। है। इसीलिए इनसे तत्कालीन समय की स्थिति के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

4.3.6 पुराण

पुराण का अर्थ प्राचीन है। पुराण अठारह है। ब्रह्म, पद्म, विष्णु, शिव, भागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, लिंग, वराह, स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य,गरूड़ तथा ब्रह्माण्ड। पुराणो के पाच लक्षण बताये गये है– सर्ग,प्रतिसर्ग,वंश,मन्वन्तर तथा वंशानुचरित। पार्जिटर नामक विद्वान ने सर्वप्रथम विद्वानों का ध्यान इसकी ऐतिहासिकता की ओर दिलाया था। ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने के लिए पुराण एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। इन पुराणों से प्राचीन राजवंशों तथा उनके क्रियाकलापों का ज्ञान प्राप्त होता है। ये पुराण वर्तमान रूप में सम्भवतः ईसा की तीसरी और चौथी शताब्दी में लिखे गए। यद्यपि इन पुराणों में दिया गया वंशानुक्रम भिन्न–भिन्न है, किन्तु फिर भी इनसे अनेक महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

4.3.7 बौद्ध साहित्य

भारतीय इतिहास के स्त्रोत के रूप में हिन्दू धार्मिक साहित्य की भॉति बौद्ध साहित्य का विशेष महत्व है। बौद्ध साहित्य के प्रमुख अंग है। पिटक–पिटक का शाब्दिक अर्थ है–पिटारी। रीज डेविडस ने भी इसका अर्थ टोकरी माना है। कालान्तर में इसका प्रयोग परम्परा एवं सम्प्रदाय के अर्थ के रूप में होने लगा था। पिटक तीन है–विनयपिटक–इसके कुल पाच भाग है। यह मूलतः संघ के नियम एवं आचार विषयक विधान का संकलन है।

सुत्तपिटक–इसके कुल तीन भाग है। इसमें मूलतः बुद्ध के उपदेशों का संग्रह है। अभिधम्मपिटक–इसके कुल सात भाग है। इसमें बुद्ध के उपदेशों की दार्शनिक व्याख्या है। इन त्रिपिटको से महात्मा बुद्ध के समकालीन शासकों तथा तत्कालीन भारत की राजनीतिक सामाजिक तथा आर्थिक जीवन के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। जातक साहित्य–जातक कथाओं का बौद्ध साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। जातक साहित्य में बुद्ध के पूर्व जन्म की गाथाओं का संकलन है। जातको की संख्या 550 है। जातक कथाओं से तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक आदि अनेक पक्षों की जानकारी प्राप्त होती है। सांची एवं भरहुत के स्तूपों पर अनेक जातक कथाओं का अंकन मिलता है। मिलिन्दपहो–पालि भाषा में रचित इस ग्रन्थ में यूनानी राजा मिलिन्द एवं बौद्व विद्वान नागसेन के मध्य वार्ता का संकलन है। मिलिन्द के अनेक शंकाओं का समाधान नागसेन करते है। इस ग्रन्थ के कुल सात सर्ग है।

4.3.8 जैन साहित्य

प्राचीन भारतीय इतिहास के विषय में जैन साहित्य से भी अनेक महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। अनेक ऐसे तथ्यों का वर्णन जैन साहित्य में मिलता है, जिनका वर्ण ब्राहाण एवं बौद्ध साहित्य में या तो किया ही नहीं गया है या फिर बहुत कम किया गया है। जैन साहित्य को आगम कहा जाता है। इसमें 12 अंग, 12 उपांग, 10 प्रकीर्ण, 6 छंदसूत्र नन्दिसूत्र, अनुयोगद्वार और मूल सूत्र सम्मलित हैं।

4.3.9 ऐतिहासिक ग्रन्थ

अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थों को प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोतों में स्थान दिया गया है। इन ऐतिहासिक ग्रन्थों से संबन्धित शासकों व राज्यों के विषय में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक अवस्था का यथोचित ज्ञान प्राप्त होता है। ऐतिहासिक ग्रन्थों में गार्गी संहिता, शुक्रनीतिसार,

राजतरंगिणी, हर्षचरित, मुद्राराक्षस, पृथ्वीराजरासों, रसमाला, कीर्तिकौमुदी, प्रबन्ध चिन्तामणि, प्रबन्धकोष, विक्रमांकचरित, नवसाहसांक चरित्र, रामचरित, भोज प्रबन्ध, गोडवाहो, कुमार पाल चरित, हम्मीर काव्य आदि प्रमुख हैं।

4.4 इतिहास के गैर–साहित्यिक स्रोत

प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में पुरातात्विक स्रोतों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। पुरातत्व इतिहास के निर्माण में प्रतिपादक एवं समर्थक दोनो रूपों में कार्य करता है। प्रतिपादक के रूप में ऐसे तथ्य प्रकाशित किये जिनके विषय में हमें किसी अन्य साक्ष्य से कोई सूचना नहीं मिलती है। जैसे समुद्रगुप्त की विजय पर प्रयाग प्रशस्ति और खारवेल की उपलब्धियों पर हाथीगुम्फा अभिलेख ही प्रकाश डालते है। भारत में पुरांतात्विक सामग्री का भण्डार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। अनेक स्थानों पर किया गया उत्खनन कार्य इसका प्रमाण है। वास्तव में प्राचीन भारतीय इतिहास के अध्ययन के लिए पुरातात्विक सामग्री का अत्यधिक महत्व है। पुरातात्विक सामग्री के अन्तर्गत अभिलेख, मुद्राएं स्मारक भवन, मूर्तियाँ, चित्रकला तथा अवशेषों को रखा जाता है।

4.4.1 अभिलेख

इतिहास के जानने में अभिलेखों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। अभिलेखों के अन्तर्गत उन सभी प्राचीन लेखों का सम्मिलित किया गया जाता है जो मिट्टी, ईंट,पत्थर, धातु, अथवा लकड़ी आदि पर उत्कीर्ण है। भारत में अभिलेख स्तम्भ,शिलाओं गुफाओं मूर्तियों,पात्रों, ताम्रपत्रों आदि पर प्राप्त होते है। डा. वी.ए.स्मिथ के अनुसार भारतीय इतिहास पर प्रकाश डालने वाले स्रोतों में अभिलेखों को सर्वाधिक प्रामणिक और महत्वपूर्ण माना है। प्रो.रैप्सन के अनुसार अभिलेख जिस काल और स्थान के होते है। वे उस काल और स्थान के राजनीतिक,सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियो का ज्ञान कराने में अत्यधिक सहायक होते है। प्राचीन भारतीय इतिहास को जानने के लिए

पुरातात्विक स्त्रोतों में अभिलेख सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं विश्वसनीय हैं। सबसे प्राचीन अभिलेखों 1400 ई0पू0 में मध्य एशिया के बोगजकोई से प्राप्त अभिलेख हैं। इनसे ऋग्वेद की तिथि ज्ञात करने में सहायता मिलती है। अभिलेखों के अन्तर्गत गुफालेख, शिलालेख, स्तम्भ लेख, ताम्रपत्र आदि आते हैं।

4.4.2 मुद्राएँ

सिक्को के अध्ययन को मुद्राशास्त्र कहा जाता है। पुरातात्विक सामग्री में मुद्राओं का ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है। ये मुद्राएँ, प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास लिखने में बड़ी ही उपयोगी सिद्ध हुई हैं। भारत में विभिन्न भागों से विभिन्न प्रकार की मुद्राएँ, जैसे स्वर्ण मुद्राएँ, रजत मुद्राएँ, तथा ताम्र मुद्राएँ, प्राप्त हुई हैं। मुद्राओं अथवा सिक्कों से तत्कालीन आर्थिक दशा, संबंधित सम्राट की राज्य सीमा, कला, धार्मिक दशा तथा अन्य अनेक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी प्राप्त होती है। सिक्के विनिमय के माध्यम के रूप में काम में लिए जाते थे। सर्वप्रथम स्वर्ण मुद्राएँ कुषाण वंश के शासको के द्वारा प्रचलित किये गये थे।

4.4.3 स्मारक

पुरातात्विक सामग्री में अभिलेख और मुद्राओं के साथ ही स्मारको का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है। राजनीतिक दृष्टिकोण से तो स्मारको का अधिक महत्व नही है, किन्तु धार्मिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से स्मारकों का बहुत अधिक महत्व है। स्मारकों के अन्तर्गत सभी प्रकार के भवन, मूर्तियॉ, इमारते, कलात्मक वस्तुऍ, मन्दिर, विहार, स्तूप आदि रखे जा सकतें है। ये स्मारक तत्कालीन भारत की धार्मिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक स्थिति के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। भारत में विभिन्न स्थलों पर हुए उत्खनन में प्रचुर मात्रा में अवशेष (बर्तन, हथियार, औजार, बटखरों, खिलौनें आदि) प्राप्त हुए है। इन अवशेषों से प्रागैतिहास तथा आद्य इतिहास के विषय

में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। मूर्तियों से संबंधित काल एवं क्षेत्र के जनसाधारण के धार्मिक आस्थाओं एवं कला के प्रति प्रेम के विषय में विशद जानकारी प्राप्त होती है।

4.4.4 मुहरें

मुहरें भी प्राचीन भारतीय इतिहास जानने के मुख्य स्त्रातों में आती हैं। इन मुहरों से प्राचीन भारत की अर्थव्यवस्था पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। उत्खनन से प्राप्त मुहरों ने प्राचीन भारत का इतिहास लिखने में इतिहासकारों की बहुत मदद की हैं।

4.5 विदेशी यात्रियों का विवरण

प्राचीन काल से ही भारत का विश्व के अनेको देशों के साथ राजनीतिक, सामाजिक, व्यापरिक तथा धार्मिक सम्बन्ध रहा है। भारत में समय–समय पर अनेक विदेशी यात्रियों ने भ्रमण किया और अपने यात्रा विवरण में भारत के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी दी है जो इतिहास जानने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण स्रोत है। भारत में आने वाले विभिन्न विदेशी यात्रियों का विवरण निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर जानकारी प्रदान की जा सकती है।

4.51. यूनानी इतिहास लेखक

प्रारम्भिक यूनानी लेखकों में स्काइलैक्स तथा हिकेटियस मिलेट्स का महत्वपूर्ण स्थान है। ये दोनो लेखक भारत की सिन्धु सभ्यता के विषय में जानकारी प्रदान करते है। इतिहास के जनक हेरोडोटस ने अपने ग्रन्थ हिस्टोरिका में अनेक देशों के साथ भारत का विवरण दिया है। वह भारतीय सीमा प्रान्त ओर फारसी साम्राज्य के राजनीतिक सम्पर्क का वर्णन करता है। टेसियस नामक लेखक ने भारत के विषय में विवरण दिया है। सिकन्दर के साथ अनेक विद्वान एवं लेखक भारत आये थे जिनके विवरण अत्यन्त

प्रामाणिक एवं विश्वसनीय है। इन लेखकों में निर्याकस,एरिस्टोबुल तथा ओनेसिक्रिटस उल्लेखनीय है। इनके द्वारा लिखित विवरण मूल रूप में उपलब्ध नही है। लेकिन स्ट्रैबो, प्लिनी तथा एरियन आदि के उद्वरण से प्राप्त होते है।

सिकन्दर के बाद आने वाले यूनानी लेखकों में मेगस्थनीज, डाइमेकस तथा डायोनिसियस महत्वपूर्ण है। मेगस्थनीज ने अपनी पुस्तक इण्डिका में मौर्यकालीन स्थिति का वर्णन किया है। यह चन्द्रगुप्त मौर्य के काल में सेल्यूकस के द्वारा भेजा गया राजदूत था। उसकी पुस्तक मूल रूप में उपलब्ध नही है। उसके विवरण परवर्ती लेखको जैसे एरियन,जस्टिन आदि के उद्वरण से प्राप्त होते है।

डाइमेकस सीारियाई शासक अन्तियोकस के द्वारा बिन्दुसार के काल में भारत आया था। इसका विवरण प्राप्त नही होता है। स्ट्रैबो के उद्वरण में इसका विवरण मिलता है। डायोनिसियस मिस्री शासक टालेमी फिलाडेल्फस के द्वारा मौर्य शासक अशोक के काल में भारत आया था। पेट्राक्लीज नामक यूनानी सेल्यूकस एवं एण्टिओकस प्रथम के किसी पूर्वी भाग का अधिकारी था, जिसके पूर्वी देशो के भूगोल नामक ग्रन्थ में भारत का विवरण मिलता है। ई. पू.100 में 'पेरीप्लस ऑफ दि इरीथ्रियन सी' नामक पुस्तक की रचना किसी यूनानी यात्री ने की थी। लेखक ने अपने वर्णन में भारतीय बन्दरगाहों के नाम क्रमशः यथा–भृगुकच्छ, प्रतिष्ठान, सोपारा, कल्याण, नोरा, टिण्डीस, सुचिरीपत्तन तथा नीलकण्ठ से आयात–निर्यात किये जाने वाली वस्तुओं का उल्लेख किया है। एलियन दूसरी शताब्दी ई.का यूनानी लेखक था जिसने 'ए कलेक्शन ऑफ मिसलेनसियस हिस्ट्री और आन दि पिक्यूलियारटिजीस ऑफ एनिमल्स' नामक दो महत्वपूर्ण ग्रन्थो में भारतीय इतिहास एवं भारतीय पशु वर्ग की अनेक महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। कासमास एलेक्जेन्ड्रिया का एक यूनानी लेखक था,जिसने क्रिशिचयन टोपोग्राफी में पश्चिमी देशों से भारत के व्यापार के विषय में वर्णन किया है।

4.5.2 चीनी इतिहास लेखक

यूनानी लेखकों की तरह चीनी साहित्य से भी भारतीय इतिहास के निर्माण में सहायता मिलती है। चीन का प्रथम इतिहासकार सुमाचीन है। प्रथम शताब्दी ई.पू. में इसके द्वारा लिखित पुस्तक में भारत के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। फाहयान चीनी यात्री जो कि चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के काल में भारत आया था। हवेनसांग यह हर्षवर्धन के काल में भारत आया था। इसका भारत सम्बन्धी विवरण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इनके यात्रा का विवरण सी–यू–की के नाम से जाना जाता हैं। इत्सिंग नामक चीनी यात्री सातवी सदी में भारत आया था। हुई ली रचित युवान च्वांग की जीवनी और मात्वानलीन की रचनाओं से भी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। तिब्बती लेखक लामा तारानाथ की रचनाओं से भी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

4.5.3 मुस्लिम इतिहास लेखक

यूनानी एवं चीनी लेखको के विवरणों की तरह मुस्लिम लेखकों के विवरणों से भी इतिहास के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इसमें अल्बरूनी की पुस्तक तहकीक–ए–हिन्द में राजपूत काल की भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। यह महमूद गजनवी के काल में भारत आया था। इसके अलावा अलविलादुरी, सुलेमान, अलमसूदी, अलइस्तखरी, मिनहाजुद्दीन, फरिश्ता आदि अन्य लेखको के विवरण से भारतीय इतिहास पर प्रकाश पड़ता है।

4.6 सारांश

प्राचीन भारतीय इतिहास के जानने के विभिन्न प्रकार के स्रोत प्रचलित है। जिनके आधार पर प्राचीन भारतीय इतिहास के अनेक महत्वपूर्ण पक्षों की सम्यक जानकारी प्राप्त की जा सकती है। साहित्यिक स्रोत की अपेक्षा पुरातात्विक स्रोत की विश्वसनीयता ज्यादा अधिक प्रतीत होती है। सामान्य तौर पर यह कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीय इतिहास के पुनिर्माण में दोनो स्रोतों की अपनी–अपनी महत्ता एवं उपयोगिता है।

4.7 शब्दावली

- **तहकीक–ए–हिन्द**–अल्बरुनी की पुस्तक
- **सी–यू–की**–ह्वेनसांग का यात्रा विवरण
- **हेरोडोटस**– इतिहास का जनक

4.8 बोध प्रश्न

1. प्राचीन इतिहास के पुरातात्विक स्रोतों के महत्व का वर्णन कीजिए।

   ....

   ....

   .इतिहास के निर्माण में सिक्कों एवं महत्व का वर्णन कीजिए।

   ....

   ....

   इतिहास के जानने में पुराणों की ऐतिहासिकता के महत्व का वर्णन कीजिए।

   ....

   ....

4.9 सहायक ग्रन्थ

1. पाण्डे, गोविन्द चन्द, इतिहास, स्वरूप एवं सिद्वान्त, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर, 2019

2. चौबे, डॉ. झारखण्डे, इतिहास–दर्शन, विश्वविद्यालय, प्रकाशन, वाराणसी, 2005

3. सिंह, डॉ.परमानन्द, इतिहास–दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 2010

इकाई : 05 – शोध विधि और इतिहास लेखन

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 विषय का चयन

5.3 परिकल्पना

5.4 विषय की रूपरेखा

5.6 शोध सामग्री का स्रोत

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 सारांश

5.9 शब्दावली

5.10 बोध प्रश्न

5.11 सहायक ग्रंथ

5.0 उद्देश्य

- इस इकाई में शोध विषय के विभिन्न आयामों एवं पहलुओं के विषय में जानेगें।
- इतिहास लेखन एवं शोध के सम्बन्धों के विषय में शिक्षार्थी जानेगें।

5.1 प्रस्तावना

शोध एक ऐसा विषय है जिसके विषय में अनेक प्रकार की अवधारणाएं एवं परिकल्पनाएं मान्य एवं प्रचलित है। शोध को एक ऐसे क्रिया–कलाप के रूप में वर्णन किया जा सकता है जिसका उद्देश्य किसी वस्तु के नवीन पक्षों एवं पहलुओं को प्रकाशित करना है। किसी भी शोध का मूल होता है कि शोधार्थी का निष्कर्ष समाज के लिए कितना नवोन्मेषी तथा लाभदायक है। इतिहासकार बी शेख अली के अनुसार 'शोध वह क्रिया है जिसके द्वारा किसी नवीन विचार या ज्ञान विस्तार के लिए कुछ नवीन प्रयास किये जाते है। यह एक प्रयास है जिसके द्वारा सुसंगठित, सुव्यवस्थित एवं क्रमबद्वता के चरणों को ध्यान में रखते हुए नवीन तथ्यों की खोज की जाती है या पूर्व ज्ञात तथ्यों के सन्दर्भ में नवीन अवधारणाएँ प्रतिपादित की जाती है।'

5.2 विषय का चयन

शोध करने वाले शोधकर्ता को सर्वप्रथम विषय एवं क्षेत्र का निर्धारण करना परम आवश्यक होता है। विषय को शोधकर्ता को अपनी रूचि एवं क्षमता के आधार पर चयन करना चाहिए। ज्ञान के विविध क्षेत्र है। और प्रत्येक क्षेत्र में शोध की आपार सम्भावनाएं रहती है। इतिहास के शोधकर्ता के लिए इतिहास के सम्बद्व विभिन्न आयाम हो सकते है। इस विषय में विभिन्न विश्वविद्यालयों में हुए शोध कार्यो की जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है। प्राप्त जानकारी के आधार शोध कार्य को आसानी से निष्कर्ष प्राप्त किया जा सकता है। विषय का चयन हो जाने के बाद शोधकर्ता को तत्सम्बन्धी

प्रकाशित–अप्रकाशित सामग्री का मनोयोगपूर्वक अध्ययन करना चााहिए। इससे उसकी रूपरेखा तथा स्पष्ट परिकल्पना का निर्धारण हो सकेगा। परिकल्पना विषय के सम्बन्ध में शोधकर्ता की इस धारणा को स्पष्ट करती है कि वह किस तथ्य या पक्ष को उद्‌घाटित करना चाहता है।

5.3 परिकल्पना

परिकल्पना एक विचार है जो परानुभव से उत्पन्न होता है। परिकल्पना के निर्माण के विभिन्न स्रोत हो सकते है।

5.4 विषय का रूपरेखा

विषय की परिकल्पना का निर्धारण करने के बाद उसकी रूपरेखा निर्धारण का कार्य आता है। रूपरेखा तो सम्बद्व साहित्य के अध्ययन के उपरान्त स्पष्ट होती है। शोधकर्ता अपने आवेदन पत्र के अस्थायी रूपरेखा प्रस्तुत करता है। जिसमें वह अध्यायो के शीर्षक और उसमें वार्णित प्रसंगों का उल्लेख करता है। कही–कही शोध प्रबन्ध जमा करने के साथ ही रूपरेखा दिये जाने का प्रावधान होता है। रूपेरखा विषय के शीर्षक के अनुसार तैयार की जाती है। प्रत्येक अध्याय केवल शीर्षक मात्र न होकर उसकी विषय वस्तु का निर्देशक भी है। रूपेरखा तैयार करने से पूर्व विषय पर प्रकाशित कार्य के अध्ययन से यह विदित होता है कि उस विषय पर कितना कार्य हो चुका है। और कितना किस दृष्टिकोण से कार्य होना शेष है। इस प्रकार के अध्ययन से शोध का लक्ष्य स्पष्ट हो जायेगा और रूपरेखा भी स्पष्ट रूप से तैयार की जा सकेगी।

5.5 शोध सामग्री के स्रोत

शोध साम्रगी के स्रोत विविध प्रकार के होते है। यह स्रोत ऐतिहासिक तथा गैर ऐतिहासिक दोनों प्रकार के हो सकते है। स्रोत साम्रगी की विश्वसनीयता एवं तथ्यपरकता का पूर्णतः ध्यान रखा जाना चाहिए।

5.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

इसके अन्र्तगत आकड़े एकत्रित किये जाते है। सम्भवतः एक ही प्रकार के कार्ड का प्रयोग करना चाहिए। इसे तैयार करने से पूर्व अध्येता को पुस्तकालय वर्गीकरण की प्रक्रिया से परिचित होना चाहिए। प्रायः शब्दकोष–सूचीपत्र प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। इसे पूर्ण करने के लिए पाद–टिप्पणियों की सहायता ली जा सकती है। यह प्रक्रिया एक सतत चलने वाली विधि है।

5.7 सारांश

किसी भी शोध का मूल उद्‌देश्य होता है कि शोधार्थी का निष्कर्ष समाज के लिए कितना नवोन्मेषी तथा लाभदायक है। 'शोध वह क्रिया है जिसके द्वारा किसी नवीन विचार या ज्ञान विस्तार के लिए कुछ नवीन प्रयास किये जाते है।

5.8 शब्दावली

- परिकल्पना– एक विचार है जो परानुभव से उत्पन्न होता है।

5.9 सहायक ग्रन्थ

1. पाण्डे, गोविन्द चन्द, इतिहास, स्वरूप एवं सिद्वान्त, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर, 2019
2. चौबे, डॉ. झारखण्डे, इतिहास–दर्शन, विश्वविद्यालय, प्रकाशन, वाराणसी, 2005
3. सिंह, डॉ.परमानन्द, इतिहास–दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 2010

Uttar Pradesh Rajarshi Tandon
Open University

MAHY-111

इतिहास दर्शन एवं लेखन सिद्धान्त एवं प्रवृत्तियाँ

(भाग–एक)

खण्ड
2

प्रमुख भारतीय इतिहासकार

इकाई– 1

भारत के प्राचीन इतिहास लेखक 49

इकाई– 2

मध्यकालीन इतिहास लेखक 57

इकाई– 3

आधुनिक इतिहास लेखक 62

इकाई– 4

प्रमुख पाश्चात्य इतिहासकार 74

इकाई– 5

भारतीय इतिहास लेखन का यूरोपियन मत 86

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,प्रयागराज

इतिहास दर्शन एवं लेखन : सिद्धान्त एवं प्रवृत्तियाँ

परामर्श समिति

प्रो0 सीमा सिंह — माननीया कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

कर्नल विनय कुमार — कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — निदेशक, समाज विज्ञान, विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य,इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

इकाई- 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10,11,12,13,14,15 (खण्ड 1,2,3)

प्रो0 एम0 पी0 अहिरवार — आचार्य, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

इकाई- 1,2,3,4,5, (खण्ड 5)

डॉ0 रमाकान्त — सह आचार्य, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

इकाई- 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10 (खण्ड 4, 6)

सम्पादक

प्रो0 विजय बहादुर सिंह यादव — आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले रूहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली (इकाई 1 - 30)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रित वर्ष - 2023

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. - 978-93-94487-55-0

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायीं नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से कर्नल विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित **2024**.

मुद्रक : चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा. लि. 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज.

इकाई : 01 : भारत के प्राचीन इतिहास लेखक

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 प्राचीन भारतीय इतिहास लेखक

- 1.2.1 बाणभट्ट
- 1.2.2 विल्हण
- 1.2.3 सोमेश्वरदेव तृतीय
- 1.2.4 जगनिक
- 1.2.5 चन्दवरदाई
- 1.2.6 पदमगुप्त
- 1.2.7 कल्हण

1.3 सारांश

1.4 शब्दावली

1.5 बोध प्रश्न

1.6 सहायक ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेंगे–

- प्राचीन भारत के इतिहास लेखकों के विषय में।

1.1 प्रस्तावना

हमारे प्राचीन साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कई एक अपने नाम से ही प्रसिद्ध है और उनके रचयिता के बारे में हमें से कोई जानकारी नहीं है। ऐसी कृतियों को काल्पनिक नाम दिये गये है। जिनके नाम निर्धारण में असमंजस की स्थिति प्राप्त हुई है, उनके लेखक के रूप में हमने व्यास और ब्रह्य (ईश्वर) का ही नाम दे डाला। धार्मिक क्षेत्र में तो इससे भी काम चल सकता है, किन्तु जहाँ तक इतिहास की बात है, इसमें ऐसे नाम नहीं चल सकते। इसलिए हमने केवल उन्हीं को प्राचीन भारत के इतिहास लेखक की श्रेणी में रखने का प्रयास किया है जिनका हमें कुछ–कुछ जीवन चरित्र प्राप्त हो पाया है और जिनकी रचना (कृति) मिल सकी है।

1.2.1 बाणभट्ट

भारतीय इतिहास–लेखन की परम्परा में 7 वीं सदी के प्रारम्भ में बाणभट्ट का आगमन एक महत्वपूर्ण अध्याय है। उनके हर्षचरित में अपने संरक्षक हर्ष का जीवन चरित्र लिखा। यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि हर्ष भार्गव था और इतिहास–लेखन कला उसे अपने परिवार से विरासत के रूा में मिली थी। उसका हर्षचरित केवल एक इतिहास ही नहीं अपितु साहित्य भी है और इसे काव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसमें बाण ने हर्ष की जीवन–घटनाओं का क्रमबद्ध उल्लेख नही किया है और साथ ही हर्ष के समग्र जीवन का वृत्तान्त भी नही है। उसने अन्य काव्य–साहित्य की तरह इसमें तथ्य और गल्प का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया है। इसकी कथावस्तु के मूल में मौखरियों पर आक्रमण है जिसमें मौखरी सम्राट की मृत्यु हो जाती

है। दुश्मनों को निकाल बाहर करने के लिए हर्ष सेना के साथ आगे बढ़ता है और अपनी बहन राजश्री की जान बचाता है, जो विन्ध्य पर्वत की ओर भागकर चिता में जल मरने की तैयारी कर रही थी। बाण ने युद्ध का कोई विस्तृत विवरण नहीं दिया है और हर्ष जब राज्यश्री से मिल जाता हैं, तो कहानी खत्म हो जाती है। बाण यह बतलाता है कि हर्ष साम्राज्य की असली उत्तराधिकारी था।

1.2.2 विल्हण

हिन्दू इतिहास–लेखन में विल्हण ने भी बड़ा योगदान दिया है। उसने अपने संरक्षक विक्रमादित्य छठा का जीवन चरित्र लिखा है। विल्हण 1040 ई0 में कश्मीर में पैदा हुआ था। वह सपरिवार खोनमुखा चला आया। जहाँ विक्रमादित्य के पिता सोमेश्वर प्रथम ने उसे संरक्षण प्रदान किया। सोमेश्वर कल्याणी का चालुक्य राजा था। विल्हण के संरक्षण ने उसे विद्यापति की पदवी दी। उसने 'कर्णसुन्दरी' नाटक की रचना की, जिसमें उसने अन्हिलवाड़ के राजा कर्णदेव का मायामल्लदेव के साथ विवाह का वर्णन किया है। किन्तु उसकी सबसे महत्वपपूर्ण कृत्रि विक्रमदेव चरित है, जिसमें विक्रमादित्य छठे के ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लेख है। विल्हण ने विक्रमादित्य के बड़े भाई सोमेश्वर द्वितीय का चिरत्रांकन एक खलनायक के रूप में किया है और विक्रमादित्य को नायक बतलाया है। किन्तु, विल्हण के कथन की पुष्टि अन्य ऐतिहासिक तथ्यों द्वारा नहीं होती। उदाहरण के लिए, सोमेश्वर द्वितीय के अभिलेख उसके उज्जवल चरित्र पर प्रकाश डालते हैं। अभिलेखों से पता चलता है कि उसके राज्यारोहण से धर्म–विजय हुई और त्रेता युग का आगमन हुआ। अतः विल्हण की कृति ऐतिहासिक नहीं मानी जा सकती और उसके राजा का आंशिक विवरण दिया है। उसने उसके भाई के विरूद्ध युद्धों का भी उल्लेख नहीं किया है। उसकी कृति एक काव्य है, जिसमें ऐतिहासिक तथ्यों का अभाव है। विल्हण ने यह बतलाया है कि किस प्रकार विक्रमादित्य ने स्वयंवर में रूपवती चन्द्रलेखा को प्राप्त किया। इस तरह विल्हण ने

ऐतिहासिक तथ्यों को पारम्परिक ढाँचे में पिरोने का प्रयत्न किया है। प्रो0 पाठक ने ठीक कहा है– ''हमें मध्यकालीन इतिहास का अध्ययन मध्यकालीन संस्कृति के संदर्भ में करना चाहिए।''

1.2.3 सोमेश्वरदेव तृतीय

सोमेश्वरदेव तृतीय एक अन्य इतिहासकार था। उसने 'मनसोल्लास' की रचना की। इसमें राजा के कर्तव्यों और उसके सुखों का वर्णन है। उसकी एक अन्य कृति अपने पिता का अधूरा जीवन–चरित्र विक्रमोभ्युदय है। इसमें तीन अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में कर्नाटक के भूगोल और वहाँ के लोगों के बारे में है। द्वितिय अध्याय में कल्याण के ऐश्वर्य के बारे में है। तीसरे अध्याय में चालुक्य वंश का आदि से विक्रमादित्य के शासनकाल तक का वर्णन है। इस पर टिप्पणी करते हुए प्रोव पाठक ने कहा है, "बाण के हर्षचरित को छोड़कर विक्रमोभ्युदय ही प्राचीन भारत का एकमात्र ऐतिहासिक गद्य–वृतान्त है।"

सोमेश्वर देव की रचना में गैर ऐतिहासिक तथ्यों का भी समावेश हुआ है। उसने शाही नायकों यथा तेलपा द्वितीय और विक्रमादित्य छठे को विष्णु का अवतार माना है जिनका अवतार पृथ्वी पर दैत्यों के विनाश के लिए हुआ था। इस प्रकार, इतिहास असत्य पर सत्य की विजय में डूब गया।

1.2.4 जगनिक

जगनिक एक अन्य लेखक था जिसने पृथ्वीराज विजय काव्य लिखा। इसमें उसने उत्तरी राजस्थान के चाहमान शासक पृथ्वीराज के शौर्य का उल्लेख किया है। विल्हण की भंति जगनक भी कश्मीर का रहने वाला था। उसे संभवतः वाल्मीकि की रामायण से पृथ्वीराज विजय की रचना की प्रेरणा प्राप्त हुई थी। सम्भवतः उसने 1191 और 1193 के बीच इसकी रचना पूरी की होगी। जगनक ने अपने को वाल्मीकि का अवतार बतलाने का प्रयास

किया और कहा कि जिस प्रकार ब्रह्म के कहने पर वाल्मीकि ने रामायण की रचना की, उसी प्रकार माँ शारदा के कहने पर उसने पृथ्वीराज विजय की रचना की है। उसने पृथ्वीराज तृतीय का संबंध सूर्यवंशी राजा राम से स्थापित किया। उसने बतलाया कि पृथ्वीराज विष्णु के अवतार थे जो भारत भूमि से मंलेच्छों (मुसलमानों) को निकाल–बाहर करने के लिए उत्पन्न हुए थे। यद्यपि अपनी रचना के प्रथम भाग में जगनक ने अलौकिक तत्वों का समावेश किया है। तथापि दूसरे भाग में ऐतिहासिक साक्ष्यों और अभिलेखों पर जोर दिया है।

तत्कालीन परम्परा का पालन करते हुए जगनक ने स्वर्गीय परी तिलोत्तमा का उल्लेख किया है और यह बतलाया है कि किस प्रकार तिलोत्तमा ने प्रेम में पृथ्वीराज को परेशान किया। जगनक ने तिलोत्तमा को सीता का अवतार बतलाया। जगनक के अनुसार पृथ्वीराज ने मुहम्मद गौरी को पराजित किया और तिलोत्तमा से ब्याह किया।

1.2.5 चन्दवरदाई

चन्दवरदाई के पृथ्वीराज रासो महाकाव्य में यह उल्लिखित है कि गहड़वाल राजकुमारी संयोगिता पृथ्वीराज के शौर्य–वीर्य से काफी प्रभावित थी और उससे व्याह करना चाहती थी। किन्तु उसके पिता जयचन्द की पृथ्वीराज से दुश्मनी थी और वह ऐसा नहीं चाहता था। अंततोगत्वा पृथ्वीराज संयोगिता से ब्याह करने में सफल रहा। जगनक की तिलोम्तमा और दूसरी कोई नहीं अपितु संयोगिता है। परम्परा का पालन करते हुए और अपनी कवि–सुलभ प्रतिभा का प्रदर्शन करते हेतु जगनक ने अलौकिक तिलोत्तमा को प्रस्तुत किया है।

पृथ्वीराज तृतीय के दरबार के दूसरे कवि चन्दवरादाई ने पृथ्वीराज रासो की रचना की। इसमें चौहान राजपूतों की उत्पति और उनके साहसिक कार्यों का उल्लेख है। किन्तु अब पृथ्वीराज रासो मूलरूप में उपलब्ध नहीं है

और बाद में इसमें अन्य बातें भी शामिल कर दी गई हैं। किन्तु ऐतिहासिकता के दृष्टिकोण से जगनक की कृति से यह कम महत्वपूर्ण है।

1.2.6 पदमगुप्त

पदमगुप्त ने अवंती के परमार राजा सिंधुराज पर एक काव्य लिखा है। यद्यपि यह काव्य वास्तविक घटनाओं पर आधारित है तथापि इसे एक रोमांचकारी उपाख्यान कर रूप दे दिया गया है। उसने बतलाया है कि किस तरह नाग राजकुमारी शशिप्रभा के साथ राजा के संबंध होने पर शशिप्रभा ने उसे एक विश्वजनीन सम्राट बना दिया। प्रोव वार्डर ने इसे कहानी को काल्पनिक बतलाया है।

1.2.7 कल्हण

संभवतः प्राचीन भारत में सबसे अच्छा इतिहास कल्हण ने लिखा। वह कश्मीर का ब्राह्माण था। वह कश्मीर के राजा हर्ष के मंत्री चंपक का पुत्र था। उसने 1148 ई. में लिखना शुरू किया और इसे दो वर्षों में पूरा किया। उसकी कृति 'राजतरंगिणी (Chronicles of Kashmir) में कश्मीर का इतिहास है। इसमें किसी विशेष राजवंश का उल्लेख नहीं है। इसकी रचना करते समय कल्हण ने समसामयिक दस्तावेजों, आज्ञाप्तियों, शिलालेखों, मुद्रा, प्राचीन स्मारकों आदि का गहरा अध्ययन किया था। इससे पता चलता है कि वह आधुनिक इतिहास–लेखन कला से परिचित था।

'राजतरंगिनी' में लगभग 8000 संस्कृत छन्द है। इसे तीन भागों में बाँटा जा सकता है। प्रथम भाग में समसामयिक परम्पराओं के आलोक में अतीत की घटनाओं का उल्लेख है। दूसरे भाग में कार्कोट और उत्पल राजवंशों का इतिहास है। तीसरे भाग में कश्मीर के लोहार राजवंश का इतिहास है। इस प्रकार, राजतरंगिणी में कश्मीर के राजाओं का उल्लेख है। कल्हण ने पौराणिक राजा लव का तथा ललितादित्य, यशस्कर, मेघवाहन एवं

मिहिरकुल के शासनकाल की घटनाओं का उल्लेख किया है। वस्तुतः राजतरंगिणी सही अर्थ में इतिहास है।

1.3 सारांश

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि प्राचीन भारत में इतिहास–लेखन कला विकसित नहीं थी। किन्तु, इसी आधार पर यह कह देना उपर्युक्त नहीं होगा कि प्राचीन भारत ऐतिहासिक घटनाओं से शून्य था। यह ठीक है कि प्राचीन भारत पर कोई क्रमबद्ध या तिथिपरक इतिहास नहीं मिलता। विंटरनित्ज का यह कथन आंशिक रूप में सत्य है कि प्राचीन भारत में मनीषियों ने इतिहास–लेखन की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। प्राचीन भारत में इतिहास महाकाव्य का एक शाखा मात्र था। राजतरंगिणी को छोड़कर किसी अन्य प्राचीन हिन्दू साहित्य को इतिहास की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

1.4 शब्दावली

कल्हण कृत 'राजतरंगिणी (Chronicles of Kashmir)

1.5 बोध प्रश्न

.1 इतिहास लेखन परम्परा के विभिन्न आयामों का वर्णन करें।

....

....

2. इतिहास लेखन मे राजतरंगिणी के योगदान का वर्णन करें।

....

....

1.6 सहायक ग्रन्थ

. 1 श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011

2. बुद्वप्रकाश, इतिहास दर्शन,प्रयाग,1962

3. सिंह परमानन्द, इतिहास दर्शन,मोतीलाल बनारसी दास,नई दिल्ली, 2000

4. पाण्डे,गोविन्द चन्द्र,इतिहासः स्वरूप और सिद्वान्त,राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर,1973

इकाई : 02 : मध्यकालीन इतिहास लेखक

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 मध्यकालीन इतिहास लेखक

2.2.1 अल्बरूनी

2.2.2 मिनहज उस शिराज

2.2.3 जियाउद्दीन बरनी

2.2.4 अमीर खुसरो

2.2.5 अबुल फजल

2.2.6 अब्बास खाँ सरवनी

2.3 सारांश

2.4 शब्दावली

2.5 बोध प्रश्न

2.6 सहायक ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेगें

- मध्यकाल के प्रमुख इतिहासकारों के विषय में।

2.1 प्रस्तावना

भारतीय सदैव से ही पारलौकिक विषयों के चिन्तन में लीन रहते थे तथा इस लोक का उनका ध्यान ही नहीं था। जिसका परिणाम यह हुआ कि प्राचीन भारतीय इतिहास की सामग्री क्रमबद्ध उपलब्ध नहीं है। लेकिन इसके विपरीत साधन पर्याप्त हैं। केवल धैर्य व लगन की आवश्यकता है। डॉ. त्रिपाठी के अनुसार, "एक इतिहासकार को एक खान खोजने वाले के समान स्वर्णरूपी तथ्य प्राप्त करने के लिए तर्कपूर्ण विचार एवं धैर्य रूपी कुल्हाड़े से काम लेना चाहिए।" मध्यकालीन समय में काफी ऐतिहासिक ग्रन्थ लिखे गये। इस काल के इतिहासकारों ने ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचना अधिकतर फारसी भाषा में ही की थी।

2.2 मध्यकालीन इतिहास लेखक

2.2.1 अल्बरूनी

अल्बरूनी का पूरा नाम मोहम्मद इब्न अहमद अल्बरूनी था। उसके साथी उसे अबू रहीम पुकारते थे। महमूद गजनवी ने जब 1025 ई0 में सोमनाथ पर आक्रमण किया था, तब अल्बरूनी उसके साथ आया था। तब अल्बरूनी ने भारत के विभिन्न भागों का भ्रमण किया और भारतीय संस्कृति को जाना। अल्बरूनी की पुस्तक तहकीक–ए–हिन्द भारत का सचित्र वर्णन करती है। अल्बरूनी ने इस पुस्तक में एक वैज्ञानिक की भाँति अवलोकन करके भारत की धार्मिक, साहित्यिक, सामाजिक स्थिति का वर्णन किया है। इस पुस्तक में आठ अध्याय हैं।

2.2.2 मिनहज उस शिराज

मिनहज उस शिराज ने तबाकत–ए–नासिरी पुस्तक खिलजी काल के प्रारम्भिक वर्षों में लिखी। इसमें उसने राजनीतिक इतिहास का वर्णन किया है। यह पुस्तक तेईस तबाकतों(जीवनियों) में विभाजित है, जिसमें क्रमानुसार राजवंशों का वर्णन किया गया है।

2.2.3 जियाउद्दीन बरनी

बरनी का जन्म 1286 में हुआ था। बरनी खिलजी सुल्तानों और मोहम्मद बिन तुगलक के शासन काल में महत्वपूर्ण पदों पर आसीन हुआ। उसकी प्रमुख कृतियाँ हैं–तारीख–ए–फिरोजशाही और फतवा–ए–जहाँदारी। उसकी पुस्तक में बलबन से लेकर फिरोजशाह तुगलक के प्रारम्भिक छः वर्षों तक का वर्णन है।

2.2.4 अमीर खुसरो

खुसरो का जन्म उत्तर प्रदेश के एटा जिले में 1252 ई0 में हुआ था। उसका पूरा नाम अबुल हसन यामिनउद्दीन खुसरो था। अमीर खुसरो प्रसिद्ध सूफी सन्त निजामउद्दीन ओलिया का शिष्य था। उसकी प्रसिद्ध ऐतिहासिक कृतियाँ निम्न हैं। **कुरान–उस–सादिन** – इसकी रचना 1289 ई0 में हुई। इसमें बंगाल के सूबेदार बुगरा खाँ और उसके पुत्र दिल्ली के सुल्तान कैकूबाद की मुलाकात का वर्णन है। **निफ्ता–उल–फुतूह** – इसमें जलालउद्दीन खिलजी के सैन्य अभियानों और विठायों का वर्णन है।

2.2.5 अबुल फजल

अबुल फजल को अकबर का संरक्षण प्राप्त था। 1574 ई0 में वह अकबर का मनसबदार था। अबुल फजल ने 1589 ई0 में अकबरनामा लिखना शुरू किया। अकबरनामा तीन भागों में लिखा गया है। तीसरे भाग को ही

आइने अकबरी कहा जाता है, जिसमें अकबर कालीन मुगल प्रशासन, सामाजिक एवं आर्थिक दशा का वर्णन है।

2.2.6 अब्बास खाँ सरवनी

शेरशाह का एकमात्र प्रसिद्ध इतिहासकार अब्बास खाँ सरवनी था जिसे शेरशाह सूरी का संरक्षण प्राप्त था। सरवनी अकबर के दरबार में रहा। उसने शेरशाह के लिए तारीख–ए–शेरशाही और अकबर के लिए तारीख–ए–अकबर शाही पुस्तक लिखी। तारीख–ए–शेरशाही में 1539 ई0 तक का वर्णन है।

बाबर–बाबर ने अपनी मातृभाषा तुर्की में अपनी आत्मकथा बाबरनामा या तुजुक–ए–बाबरी लिखी। यह भी तीन भागों में विभाजित है। इसका अन्तिम भाग भारत से सम्बन्धित है।

गुलबदन बेगम – बाबर की पुत्री गुलबदन बेगम ने भी हुमायूँ का इतिहास लिखा है। उसने अकबर की प्रार्थना पर हुमायूँनामा की रचना की। इसमें बाबर का संक्षिप्त और हुमायूँ का विस्तार से विवरण है।

2.3 सारांश

मध्यकालीन इतिहासकारों ने अपने काल एवं तत्कालीन शासकों के विषय में विस्तार से वर्णन किया है। ज्यादातर लेखक दरबारी होते थे जो राजा या सम्राट के विषय में बताते है्। आत्कथाओं के माध्यम से भी तत्कालीन व्यवस्था के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

2.4 शब्दावली

- तहकीक–ए–हिन्द– अल्बरूनी की पुस्तक

2.5 बोध प्रश्न

.1 मध्यकालीन इतिहास लेखन परम्परा के विभिन्न आयामों का वर्णन करें।

....

....

2. अलबरूनी की इतिहास लेखन के प्रति दृष्टिकोण का वर्णन करें।

....

....

1.6 सहायक ग्रन्थ

1 श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011

2. बुद्वप्रकाश, इतिहास दर्शन,प्रयाग,1962

इकाई : 03 : आधुनिक भारतीय इतिहास लेखक

इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.0 प्रस्तावना

3.2 आधुनिक भारतीय इतिहास लेखक

- 3.2.1 रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर (1837–1925)
- 3.2.2 रोमेश चन्द्र दन्त (1848–1909)
- 3.2.3 काशी प्रसाद जायसवाल (1881–1937)
- 3.2.4 राधा कुमुद मुखर्जी (1880–1963)
- 3.2.5 हेमचन्द्र राय चौधरी (1892–1957)
- 3.2.6 गोबिन्द सखाराम सरदेसाई (1865–1959)
- 3.2.7 यदुनाथ सरकार (1870–1958)
- 3.2.8 एस. कृष्णास्वामी आयंगर (1871–1953)
- 3.2.9 डॉ. रमेशचन्द्र मजूमदार (1888–1980)
- 2.2.10 शफात अहमद खाँ

3.3 सारांश

3.4 शब्दावली

3.5 बोध प्रश्न

3.6 सहायक ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेंगे–

- ·आधुनिक भारत के प्रमुख इतिहासकारों के विषय में।

3.1 प्रस्तावना

आधुनिक युग में भारत के इतिहास लेखन का कार्य पाश्चात्य इतिहासकार साम्राज्यवादी भावना से ओत–प्रोत होकर कर रहे थे। उन्होंने ब्रिटिश सभ्यता की प्रशंसा और भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत किया। इसी क्रम में भारतीय इतिहास लेखकों ने प्रतिक्रिया स्वरुप राष्ट्रीय चेतना एवं राष्ट्रप्रेम की भावना से प्रेरित होकर इतिहास लेखन का कार्य प्रारम्भ किया और इन्होंने भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की मान्यता एवं मूल्यता को विभिन्न तर्को एवं एवं तथ्यों के साथ स्थापित किया। निम्नलिखित कुछ प्रमुख इतिहासकारों के विषय में विवरण प्रस्तुत है।

3.2 आधुनिक भारतीय इतिहास लेखक

3.2.1 रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर (1837–1925)

भारत के प्रथम आधुनिक इतिहासकार रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर का जन्म 1837 ई0 में महाराष्ट्र प्रान्त के रत्नागिरि में हुआ था। रत्नागिरि से प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के बाद उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए बम्बई के एलफिंसटन कॉलेज में प्रवेश लिया। अपनी प्रतिभा, लगन एवं योग्यता के बल पर वे वहीं एलफिंटन कॉलेज में प्राचीन भाषाओ के प्रोफेसर बने। अपनी विद्वता के बल पर उन्होनें संस्कृत एवं प्राकृत व्याकरण, धर्म एवं दर्शन के साथ–साथ ऐतिहासिक अध्ययन के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किया। उनके द्वारा अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों एवं शोध पत्रों का कार्य किया गया था।

प्रमुख ग्रन्थ एवं शोध पत्रः—''द अर्ली हिस्ट्री ऑफ द डेक्कन'' (1884) बाम्बे गजेटियर के एक भाग के रुप में प्रकाशित हुआ। यह कृति प्राचीन काल से मुसलमानों की विजय तक पश्चिमी भारत का एक व्यापक ऐतिहासिक विवरण प्रदान करती है। ''ए पीपुल इन टू दि अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया'' (1900) सर्वप्रथम जनरल ऑफ दि बाम्बे ब्रान्च द रायल एशियाटिक सोसायटी से प्रकाशित हुआ। इसमें मौर्य साम्राज्य के प्रारम्भ से गुप्त साम्राज्य के अन्त तक का एक राजनैतिक इतिहास लिखा गया है। ''वैष्णविज्म शैविज्म एण्ड माइनर रिलीजियिस सिस्टम (1913)। यह एक धार्मिक पुस्तक थी। शोधपत्रों में सर्वप्रथम ''दि क्रिटिकल कम्परेटिव एण्ड हिस्टोरिकल मेथड ऑफ इन्क्वायरी ऐज एल्पाइड टू संस्कृत स्कालरशिप एण्ड फिलोलॉजी एण्ड इण्डियन आर्कियोलॉजी'' आर0जी0 भण्डारकर 19वीं सदी के विद्वान रांके के इस सूत्र वाक्य से प्रभावित थे कि इतिहासकार का कार्य अतीत का वर्णन उसी रुप में करना जैसा वह वस्तुतः था। इतिहास लेखन में भण्डारकर ने न्यायाधीश पद्वति को अपनाने की स्वीकृति प्रदान की थी। किसी विषय पर लिखने से पूर्व वे सभी उपलब्ध साक्ष्यों की समीक्षा, साक्ष्यों का मूल्य एवं साक्ष्यों की तुलनात्मक विश्वसनीयता सभी दृष्टियों से आश्वस्त होने पर ही एक न्यायाधीश की तरह लिखते थे। उन्होंने अपने शोध के आधार पर विधवा—विवाह का समर्थन किया और जाति प्रथा एवं बाल विवाह जैसी सामाजिक कुरतियों एवं कुप्रथाओं का खण्डन किया। इस प्रकार से वे एक निष्पक्ष, मौलिक तथा भारतीय इतिहासकार थे। उन्होंने अभिलेखों का मूल पाठ पाठान्तर एवं व्याख्या को एक नयी दिशा प्रदान की और आधुनिक इतिहासकारों को नया मार्ग दिया।

इतिहास—दर्शन— आर.जी. भण्डारकर निश्चित रूप से एक निष्पक्ष एवं मौलिक इतिहासकार थे। उनका दर्शन था कि इतिहासकार को एक न्यायाधीश की तरह कार्य करना चाहिए। जिस प्रकार एक न्याायाधीश न्याय देने से पूर्व साक्ष्यों का सम्यक परीक्षण एवं मूल्यांकन करता है, उसी प्रकार इतिहासकार

को भी अतीत का वर्णन करने से पूर्व तथ्यों एवं साक्ष्यों का सम्यक मूल्यांकन करना चाहिए। उसे वस्तुनिष्ठ एवं निष्पक्ष होकर अतीत का वर्णन करना चाहिए।

3.2.2 रोमेश चन्द्र दत्त (1848–1909)

रोमेश चन्द्र दत्त का जन्म पश्चिम बंगाल प्रान्त के कोलकाता में 1848ई0 में हुआ था। भारतीय सिविल सेवा के अधिकारी और संस्कृत के विद्वान रोमेश चन्द्र दन्त 1868ई0 में आई.सी.एस. की परीक्षा देने इंग्लैण्ड गए तथा 1869 ई0 में परीक्षा में तीसरा स्थान पाकर उत्तीर्ण हुए। 1871ई0 में भारत आए और प्रशासनिक पदों का कार्यभार संभाला।

प्रमुख ग्रंथः–''ए हिस्ट्री ऑव सिविललाइजेशन इन एंशियंट इण्डिया'' इस पुस्तक के तीन खण्ड थे। 'सिस्टर निवेदिता' के अनुसार यह पुस्तक ''भारत और पूरे संसार के समक्ष राष्ट्रीय गरिमा का एक आलोकन था। 'इकोनामिक हिस्ट्री ऑव इण्डिया'' यह पुस्तक दादा भाई नौरोजी के **ड्रेन थ्योरी** के बाद प्रकाश में आई और उसने तुलनात्मक रुप से गहनता से बिटिश शासन की प्रकृति की छानबीन की। उन्होने भारत की समस्या का मूल कारण कृषि सम्बन्धी समस्या को माना। उन्होंने भूमिकर के अत्यधिक आरोपण पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि ब्रिटिश औपनिवेशक अर्थव्यवस्था का दोहरा उद्देश्य ब्रिटिश उद्योग धन्धों के लिए कच्चे माल का उत्पादन की खपत था। उन्होंने यह परामर्श दिया कि ''मैनचेस्टर से प्राप्त जनादेश से बचना चाहिए'' और संरक्षण की नीति अपनानी चाहिए। उन्होने ब्रिटिश आर्थिक नीतियों का घोर विरोध किया। उन्हीं के प्रयास से ही आर्थिक निकासी की आलोचना राष्ट्रीय आन्दोलन का आर्थिक मंच बन गई।

3.2.3 काशी प्रसाद जायसवाल (1881–1937)

डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल का जन्म उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर में सन् 1881ई0 में हुआ था। वे वैश्य वर्ण के एक धनाढ्य व्यापारी परिवार में उत्पन्न हुए थे। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा नगर के अच्छे विद्यालय में प्राप्त करने के पश्चात 'लंदन मिशन स्कूल' के छात्र के रूप में प्रवेश लिया। और उच्च शिक्षा आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से इतिहास विषय के साथ एम0ए0 की उपाधि धारण की और बाद में 'बार–एट–लॉ' की पदवी भी प्राप्त की।

प्रमुख कृतियाँ:–'हिन्दू पॉलिटी (1924) यह ग्रन्थ उनके शोध पत्रों का संग्रह था। इस पुस्तक में शिशुनाग, मौर्य एवं गुप्त साम्राज्य के विषय में व्यापक विवरण दिया गया है। 'हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' राजनैतिक इतिहास के क्षेत्र में सर्वाधिक प्रसिद्ध एवं चर्चित रचना रही है। इस पुस्तक में 150 AD से 350AD की घटना का विशेष रुप से वर्णन किया गया है। इस ग्रंथ में उन्होंने विशेष रुप से नाग और वाकाटक साम्राज्य काल की घटनाओं को प्रस्तुत किया है। 'इम्पीरियल हिस्ट्री ऑफ इण्डिया (1934) इस पुस्तक में उन्होंने गुप्त एवं उत्तर गुप्तकालीन राजनैतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास लिखा है। वे एक देशभक्त, स्वाभिमानी तथा स्वतंत्र प्रकृति के व्यक्ति थे। विदेशी दासता से वह अपने को पृथक रखते थे और इसी भावना से उन्होंने इतिहास लेखन कार्य भी किया। उनकी कृतियों में हिन्दू विचार, दर्शन, धर्म शासन, प्रजातंत्र, गणराज्य, सामाजिक व्यवस्था आदि की श्रेष्ठता को चिन्हित किया गया है। अपने ऐतिहासिक अध्ययन के 25 वर्षो में उन्होंने भारतीय इतिहास लेखन के क्षेत्र में जो मौलिकता प्रदान की है, वह एक मार्ग–दर्शक के रुप में सदैव विद्यमान रहेगी और जिसे हम उनके इतिहास दर्शन के रुप में स्वीकार करते हैं।

3.2.4 राधा कुमुद मुखर्जी (1880–1963)

राधा कुमुद मुखर्जी का जन्म बंगाल प्रान्त के बरहमपुर में 1889 ई0 में हुआ था। उन्होंने कोलकाता विश्वविद्यालय से 1915ई0 में पी0एच0डी0 की उपाधि प्राप्त की। अपना शिक्षक जीवन कोलकाता के रिपन कॉलेज तथा बिशप कॉलेज से प्रारम्भ किया। बाद में काशी, मैसूर और लखनऊ विश्वविद्यालय में प्राचीन भारतीय संस्कृति तथा इतिहास के प्रोफेसर रहे। उन्होने बंगाल भू–राजस्व आयोग के सदस्य के रुप में भी काम किया। 1952–1958 तक राज्य सभा के सदस्य भी रहे थे और भारत सरकार ने उन्हें पद्मभूषण जैसे प्रतिष्ठत पुरस्कार से सम्मानित भी किया था।

प्रमुख कृतियाँः–'द हिस्ट्री ऑफ इण्डियन शिपिंग एण्ड मेरीटाइम एक्टिविटी फ्राम दी अर्लिस्ट टाइम्स' (1912) पुस्तक में प्राचीनतम काल से मुगल काल के अंत तक भारतीयों की सामुद्रिक गतिविधियों के सभी रुपों पर प्रकाश डाला गया है। 'लोकल सेल्फ–गवर्नमेंट इन एशियंट इण्डिया' पुस्तक की सराहना लॉर्ड ब्राइस, लॉर्ड हार्डेन और ए.बी. कीथ द्वारा की गई है। 'फण्डामेंटल यूनिटी ऑफ इण्डिया (1914) पुस्तक में भौगोलिक एवं राजनैतिक संकल्पनाओं के वैविध्य और संस्कृत की एक साझी निधि का वर्णन है। 'मेन एण्ड थॉट इन एशिएण्ट इण्डिया' में मुखर्जी जी ने उन्होने चित्र प्रस्तुत किया है। 'हिन्दू सिविलाइजेशन' में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का वर्णन मिलता है। वे सच्चे राष्ट्रवादी इतिहासकार थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का गहनता से अध्ययन किया और उसमें व्याप्त गुणों को सबके सामने बड़े मार्मिक एवं तार्किक ढंग से प्रस्तुत किया। उनके लेखों में विभिन्नता में एकता का सार स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

3.2.5 हेमचन्द्र राय चौधरी (1892—1957)

हेमचन्द्र राय चौधरी का जन्म 08 अप्रैल 1892 बरिसल बंगाल प्रान्त में हुआ था। बरिसल वर्तमान समय में बांग्लादेश में पड़ता है। उन्होनें 'स्कॉटिश चर्च कॉलेज कोलकाता से शिक्षा ग्रहण की थी। हेमचन्द्र राय चौधरी 1918 ई0 में कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्राध्यापक होने से पूर्व विद्यालय और महाविद्यालय में एक शिक्षक के रुप में अपनी कुशाग्र प्रतिभा की छाप छोड़ चुके थे। वे 1952ई0 तक कलकत्ता विश्वविद्यालय से जुड़े रहे और 1957ई0 में उनकी मृत्यु हो गई।

प्रमुख शोध पत्र एवं कृतियाँ:—'द पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एशिएन्ट इण्डिया फ्रॉम दी एक्सेसन ऑफ परिक्षित टु दी एक्सटिंक्शन ऑफ द गुप्त एम्पायर'' (1923) पुस्तक दो प्रमुख भाग में लिखी गई है। प्रथम भाग में महाभारत युद्ध के बाद परीक्षित के राज्यारोहण ई0पू0 9वीं शताब्दी से छठीं शताब्दी में मगध के श्रेणिक बिम्बिसार के राज्यारोहण पर प्रकाश डालते है। 'पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एंशिएंट इण्डिया' के द्वितीय भाग में बिम्बिसार के राज्यारोहण से गुप्त साम्राज्य के पतन तक के इतिहास का वर्णन है। 'मैटीरियल्स फार दी स्टडी ऑफ अर्ली स्टडी ऑफ द वैष्णवाइट सेक्ट' (1936) इस कृति की सर जार्ज ग्रियर्सन गार्बे और ए.बी. कीथ ने प्रशंसा की है। राय चौधरी ने आर.सी. मजूमदार और के.के.दन्त के साथ सह लेखन के रुप में 'एन एडवान्स हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' भी लिखा था।

3.2.6 गोबिन्द सखाराम सरदेसाई (1865—1959)

गोबिन्द सखाराम सरदेसाई का जन्म 17मई 1865ई0 में कोंकण तत्कालीन महाराष्ट्र राज्य के गोबिल ग्राम में हुआ था। इनके पितामह ने छत्रपति शिवाजी पेशवा, प्रतिनिधि इत्यादि की सेवा की गोबिन्द सखाराम का बाल्यकाल काफी कठिनाई से बीता। इनकी शिक्षा रत्नागिरि फर्ग्युसन कॉलेज

पूना और एलफिंस्टन कॉलेज मुम्बई में हुई थी। 1888 ई0 में बी0ए0 की डिग्री प्राप्त करने के बाद बड़ौदा रियासत में नौकरी कर ली थी।

प्रमुख कृतियाँः—गोबिन्द सखाराम सरदेसाई की सबसे बड़ी उपलब्धि मराठा इतिहास पर केन्द्रित उनकी पुस्तकों की श्रृंखला थी। जिसे 'मराठी रियासत' नाम दिया गया। यह आठ खण्डों में विभाजित मराठी में लिखी गई प्रारम्भ से लेकर 1848 तक मराठों के पूरे इतिहास को लिपिबद्ध किया गया है। ''हैडबुक दु द रेकार्डस इन द एलिएनेशन ऑफिस पूना'' ''शाही, शिवाजी, सम्भाली, राजाराम की जीवनियाँ'' मराठा इतिहास का अपने लम्बे अध्ययन का निचोड़ सर देसाई जी ने अपनी पुस्तक 'न्यू हिस्ट्री ऑव द मराठाज' में छापा। यह ग्रन्थ मराठा इतिहास की पुरानी और नवीन अध्ययन पद्धति के बीच की कड़ी है।

3.2.7 यदुनाथ सरकार (1870—1958)

यदुनाथ सरकार का जन्म 10 दिसम्बर 1870 ई0 में वर्तमान बांग्लादेश मे राजशाही से 80मील उत्तर पूर्व करछमरिया गाँव में हुआ था। एक असाधारण रुप से प्रतिभासम्पन्न छात्र यदुनाथ सरकार ने अंग्रेजी और इतिहास विषयों में ऑनर्स की डिग्री हासिल की थी। 1892 ई0 में उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में एम0ए0 की डिग्री प्राप्त की थी। 1893 से 1926 तक वे अंग्रेजी तथा इतिहास विषयों के शिक्षक थे। दो वर्ष तक वे कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति भी रहे थे।

प्रमुख शोध पत्र एवं कृतियाँ—'इण्डिया ऑफ औरंगजेब टोपोग्राफी स्टेटिस्टिक्स ऐण्ड रोड्स'' (1901) यदुनाथ सरकार की यह पहली पुस्तक थी। सामान्य अर्थ में इतिहास की पुस्तक नहीं थी बल्कि देश के भौतिक पक्षों का विवरण थी। ''औरंगजेब का इतिहास'' प्रथम दो खण्ड 1919 में और पाँचवा तथा अन्तिम खण्ड 1928ई0 में छापा गया। 'शिवाजी एण्ड हिज टाइम्स' (1919) ई0 में प्रकाशित हुई यदुनाथ सरकार ने विलियम इर्विन की दो पुस्तकों का

सम्पादन किया। 1922 ई0 में परवर्ती मुगलों पर विलियम इर्विन की अधूरी पुस्तक को पूरी किया और उन्होंने 'नादिरशाह' और 'द फॉल ऑफ द मुगल एम्पायर' के रुप में इर्विन के काम को पूरा किया। 'मिलिटरी हिस्ट्री ऑफ इण्डिया6 (1960) यह पुस्तक सरकार के मरणोपरांत प्रकाशित हुई। यदुनाथ सरकार की तुलना रैंक और मॉमसेन से की जा सकती है। वे निःसंदेह अपने काल के सबसे महान भारतीय इतिहासकार और विश्व के सबसे बड़े इतिहासकारों में से एक थे। उन्होंने सशक्त व्यक्तित्व और विद्वतापूर्ण कार्यो में ईमानदार और शोधपूर्ण इतिहास लेखन की एक परम्परा कायम की।

3.2.8 एस. कृष्णास्वामी आयंगर (1871–1953)

एस. कृष्णास्वामी आयंगर एक भारतीय इतिहासकार शिक्षाविद् के साथ एक वैज्ञानिक थे। इनका जन्म 15 अप्रैल 1871ई0 में तमिलनाडु प्रान्त के तंजावुर जिले में सक्कोट्टई गाँव में हुआ था। प्रारम्भ एस. कृष्णास्वामी आयंगर भौतिकी और गणित के छात्र थे। बाद में 1899 ई0 में इन्होंने विषय में एम0 ए0 की डिग्री प्राप्त की। इन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय में स्थापित प्राप्त की। इन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय में स्थापित भारतीय इतिहास और पुरातत्व विभाग में अध्यक्ष भी रहे थे।

प्रमुख कृतियाँ–'एंशिएंट इण्डिया' इस पुस्तक में गुप्त इतिहास, हूण आक्रमण नाकाटक वंश और गुर्जर वंश और गुर्जर साम्राज्य जैसे विषयों पर व्याख्यानों का एक संकलन है। 'सम कांट्रीन्यूशंस ऑफ साउथ इण्डिया टु इण्डियन कल्चर' में आयंगर जी ने दक्षिण भारतीय संस्कृत के विशेष चरित्र पर बल दिया। 'हिस्ट्री ऑफ तिरुपति' दो खण्डों में प्रकाशित है। इसमें अत्यन्त पावन धर्मस्थल का एक निष्पक्ष विवरण प्रस्तुत किया गया है। कृष्णास्वामी आयंगर का मानना था कि इतिहास की वास्तविक प्रक्रिया को लिपिबद्ध करने में यदि बाह्य कारकों का तनिक भी हस्तक्षेप होता है या यदि अन्य प्रयोजनों चाहे वे

कितने व्यापक क्यों न हो की सिद्धि के लिए इसका प्रयोग किया जाता है तो इतिहास के अध्ययन का वास्तविक महत्व समाप्त हो जाएगा।

3.2.9 डॉ. रमेशचन्द्र मजूमदार (1888—1980)

डॉ0 रमेश चन्द्र मजूमदार का जन्म वर्तमान बांग्लादेश में फरीदपुर जिले के खान्दापार गाँव में 04 दिसम्बर 1888ई0 को हुआ था। उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम0ए0, पी0एच0डी0 की उपाधि प्राप्त की थी। वे कलकत्ता विश्वविद्यालय में इतिहास के प्रोफेसर और ढाका विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे।

प्रमुख कृतियाँ—डॉ. रमेश चन्द्र मजूमदार अपने प्रारम्भिक जीवन में प्राचीन भारत में सामूहिक जीवन' 'बंगाल का इतिहास' और जावा पर एक पुस्तक लिखी। 'आउटलाइन ऑफ इण्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलाइजेशन (1927) का फलक अत्यंत व्यापक है। 1971 तक इस रचना के छह संस्करण आ चुके थे। 'एंशियट इण्डियन कॉलोनीज इन द फार ईस्ट' इस पुस्तक में दक्षिण—पूर्वी एशिया के भारतीयकृत राज्यों के इतिहास एवं संस्कृति पर गूढ़ अनुसंधान है। मजूमदार के के.के.दत्ता और एच.सी. राय चौधरी के साथ सहलेखन के रुप में 'एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' लिखा। हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ दि इण्डियन पीपुल' इसका संपादन 11 भागों में है। इसमें प्रारम्भिक काल से महमूद तक का विवरण दिया गया है। साथ ही भारतीय इतिहास को तीन काल खण्डों में विभाजित किया गया है। **प्राचीन काल** प्रारम्भ से 1000ई0 तक, **मध्य काल** 1000ई0 से 1818ई0 तक, **आधुनिक काल** 1818ई0 से आगे की घटना

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को नए अर्थो में प्रस्तुत करने के उद्देश्य से भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को अनेक खण्डों में रचना की। 'हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेन्ट' इसमें उन्होंने यह बताने का प्रयाास किया है कि कौन सी घटनाएँ घटित हुई हैं। उन्होंने हेरास स्मारक भाषण माला में इतिहास लेखन से सम्बद्ध जो

व्याख्यान दिया वह बाद में '**हिस्टारियोग्राफी इन मार्डन इण्डिया**' नाम से प्रकाशित हुआ। डॉ. रमेश चन्द्र मजूमदार इतिहास के विषय में लिखते हैं कि–इतिहास का सम्बन्ध आंतरिक सत्य के प्रति जिज्ञासा है। सत्य का अन्वेषण ही इतिहास है। उनकी दृष्टि से सत्य केवल सत्य है और पूर्ण सत्य ही इतिहास का लौह ढाँचे का होना चाहिए

2.2.10 शफात अहमद खाँ

शफात अहमद खाँ का जन्म उत्तर प्रदेश राज्य के मुरादाबाद में मध्यम वर्गीय परिवार में हुआ था। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए वे इंग्लैण्ड गए थे। वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में इतिहास विभाग के प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष भी रहे थे। उन्हें 1941ई0 में दक्षिण अफ्रिका में भारत का उच्चायुक्त नियुक्त किया गया था। प्रारम्भ में इन्होंने सम्प्रदायिक राजनीति में रुचि दिखाई थी लेकिन कालान्तर में रुढ़िवादी मुसलमानों के कोपभाजन बन गए थे। उदारवादी राष्ट्रवादी नीतियों के कारण साम्प्रदायिक कट्टरता का सामना करना पड़ा और धार्मिक उन्माद की लहर में उन पर चाकू से घातक हमला हुआ और इसके कुछ समय पश्चात इनका इंतकाल हो गया।

प्रमुख कृतियाँ–'ईस्ट इण्डिया ट्रेड इन द सेवेंटीथ सेंचुरी' में यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि वाणिज्यवाद का सिद्धान्त जो इंग्लैण्ड में विकसित किया जा रहा था के मूल कारण ईस्ट इण्डिया का व्यापार ही था।

'एंग्लो पुर्चुगीज नेगोशिएंशंस रिलेटिंग टु बाम्बे' इस पुस्तक में एग्लो पोर्चुगीज नेगोशिएशंस पुर्तगालियों द्वारा अंग्रेजों को बॉम्बे सौपे जाने का एक प्रमाणिक विवरण है। ''सोर्सेज फॉर द हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इण्डिया इन द सेवेंटीथ सेंचुरी' शफात अहमद खाँ का इतिहास के प्रति विचार था कि इतिहासकार के कार्य हैं उसे पूर्वधारणा, राजनीतिज्ञों, भेरीघोषों तथ दलीयता के विशेष तर्क–वितर्क से भी मुक्त होना चाहिए। शफात अहमद खाँ जी रैंक एक्टन धारा के इतिहास थे जिनका दस्तावेजों की अखण्ड सत्यता में गहरा विश्वास

था। इतिहास दस्तावेजों का अध्ययन मात्र नहीं है बल्कि किसी युग के अवचेतन आवेगों का गहन अध्ययन है।

3.3 सारांश

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि आधुनिक भारत के इतिहासकारों के द्वारा आधुनिक भारत के विषय में विश्लेषणात्मक तरीके से बताने का प्रयास किया गया है।

3.4 शब्दावली

- **'हिन्दू पॉलिटी**–के.पी.जायसवाल की पुस्तक
- **पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एंशिएंट इण्डिया'**–हेमचन्द्र राय चौधरी

3.5 बोध प्रश्न

.1 भारतीय इतिहास परम्परा के आयामों का वर्णन करें।

....

....

2. भारतीय इतिहासकारों का इतिहास प्रति दृष्टिकोण का वर्णन करें।

....

....

3.6 सहायक ग्रन्थ

1 श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011

2. बुद्वप्रकाश, इतिहास दर्शन, प्रयाग, 1962

इकाई : 04 –प्रमुख पाश्चात्य इतिहासकार

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 प्रमुख पाश्चात्य इतिहासकार

4.2.1 जोहान गोटफ्रीउ हेरडर (1744–1803)

4.2.2 जेम्स स्टुअर्ड मिल (1806–1873)

4.2.3 लियोपोल्ड वान रांके (179571886)

4.2.4 जनरल अलेक्जेण्डर कनिंघम (1814–1893)

4.2.5 विन्सेन्ट आर्थर स्मिथ (1843–1920)

4.2.6 रॉबिन जार्ज कालिंगवुड (1889–1943)

4.2.7 एडवर्ड हैलेट कार (1892–1982)

4.3 सारांश

4.4 शब्दावली

4.5 बोध प्रश्न

4.6 सहायक ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेंगे–

- प्रमुख पाश्चात्य इतिहासकारों के विषय में।
- प्रमुख पाश्चात्य इतिहासकारों के इतिहास लेखन की दृष्टिकोण के विषय में।

4.1 प्रस्तावना

पाश्चात्य इतिहासकार से तात्पर्य यूरोप महाद्वीप में उत्पन्न हुए इतिहासकारों से है। यूरोप में ही इतिहास लेखन की नीव पड़ी और यही पर इतिहास लेखन की परम्परा का पूर्ण रुप से विकास हुआ। यूरोप में इतिहास लेखन का कार्य क्रमबद्ध रुप से चरणबद्ध तरीके से किया जाता था और उन्हीं की देन है कि आज इतिहास का एक स्वतंत्र विषय के रुप में अध्ययन किया जाता है। उन लोगों ने धर्म, दर्शन, राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र आदि जो भी विषय अपनी लेखनी चलाने हेतु चयन किया उन सब में ऐतिहासिक व्याखाएँ प्रस्तुत की थीं और इसलिए उनके इतिहास दर्शन का क्षेत्र अत्यधिक लोकप्रिय, विस्तृत एवं वैज्ञानिक हो चला था।

4.2.1 जोहान गोटफ्रीउ हेरडर (1744–1803)

जोहान गोटफ्रीड हेरडर का जन्म 25 अगस्त 1744 ई0 में एक निर्धन परिवार में हुआ था। हेरडर का पालन–पोषण धार्मिक वातावरण में हुआ था। अपने पिता की बाइबिल और गीत पुस्तक से खुद को शिक्षित किया। 1962 ई0 में निम्सबर्ग विश्वविद्यालय में दाखिला लिया। और प्रसिद्ध दार्शनिक इमैनुअल काण्ट के शिष्य बन गए। 1769 ई0 में अपनी फ्रांस यात्रा के समय अनेक नवीन विचारधारा के दार्शनिकों का सान्निधय प्राप्त किया था। उनके प्रभाव से वह बहुमुखी प्रतिभा वाला बन गया था और दर्शन, इतिहास,

समाजशास्त्र, भाषाशास्त्र, साहित्य, कविता, प्रचार, देवशास्त्र. आदि के क्षेत्र में उसने अनेक निबन्ध एवं पुस्तकों की रचना की।

प्रमुख ग्रंथः—'साँग टू सायरस द ग्रैन्डसन ऑफ एस्टीज' (1762)'एस्से ऑन बीइंग' (1764)'ट्रीटाइज ऑन द ऑड' (1764)क्रिटिकल फॉरेस्ट ऑर रिफ्लेक्शंस ऑन द साइंस एण्ड आर्ट ऑफ द ब्यूटीफुल' (1769)हाड फिलॉसफी कैन बीकाम मोर यूनिवर्सल एण्ड यूजफुल फॉर द बेनीफिट ऑफ द पीपुल' (1765)'ट्रीटाइज ऑन द ओरिजनल ऑफ लैंग्वेज' (1772)'ओल्डेस्ट डाकुमेन्ट ऑफ द हयूमन रेस' (1776)'ऑन द इनफ्लूएन्स ऑफ द ब्यूटीफुल इन द हायर साइंस' (1781)'आइडिया ऑन द फिलॉसफी ऑफ द हिस्ट्री ऑफ मैनकाइन्ड' (1784—1791)'लेटार्स फॉर द एउवान्समेन्ट ऑफ हयूमिनटी' (1791—97)'कांलिगोन' (1800)

इतिहास दर्शन —जोहांन गोटफ्रीड हेडरर 'इमैनुअल काण्ट' और फ्रांस के नवीन विचारधारा के दार्शनिकों से अधिक प्रभावित था, अतएव उसकी रचनाओं में उनके प्रभावों का सम्पुट था। वह काण्ट के इस विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित था कि मानवीय विकास में प्राकृतिक परिस्थितियाँ अधिक प्रभावी हैं। उसने मानवीय इतिहास को समझने के लिए ब्रह्मण्ड में मानव का स्थान प्रकृति के संदर्भ में समझने पर बल दिया। उसके अनुसार 'सम्पूर्ण ब्रह्मण्ड एक सावयवी शक्ति शरीरी है। इसके भीतर से सूक्ष्म शरारों का जन्म होता है और सौरमण्डल के गर्भ से पृथ्वी तथा पृथ्वी से महाद्वीपों का आर्विभाव होता है। वहाँ पर वनस्पति और उससे जीव—जन्तु बनते हैं। जो बाद में मानव रुप में हो जाते हैं। हेडरर की यह मान्यता चिन्तनशील मानव तक विकास की प्रक्रिया में जलवायु तथा भौगोलिक परिवर्तनों को प्रभुत्वकारक स्वीकार करती है।

हेडरर ने इतिहास और प्रकृति में समन्वय स्थापित किया है और कहा है कि दोनो की प्रक्रिया एक प्रवाह है दोनों के भीतर जीवन और अवयव की समान धाराएँ प्रवाहमान होती है। उनमें पृथकता नहीं है, सभी वस्तुएँ अदृश्य

परिवर्तनों द्वारा एक–दूसरे के पीछे और एक दूसरे के भीतर प्रवाहित रहती है और सभी सृष्टि के शरीरों स्वरुपों और तन्त्रों का जीवन वायु के समान प्रवाहित और द्वीपशिला के समान गतिशील रहता है। और इस प्रकार से इतिहास और प्रकृति दोनों कालमय है, गतिशील है और जीवित भी है। मानव इतिहास भी एक प्रवाह है।

4.2.2 जेम्स स्टुअर्ड मिल (1806–1873)

जेम्स स्टुअर्ड मिल का जन्म 20 मई 1806 ई0 में लन्दन में हुआ था। जे.एस.मिल प्रसिद्ध आर्थिक, सामाजिक राजनैतिक एवं दार्शनिक चिन्तक, प्रसिद्ध इतिहासकार और अर्थशास्त्री जेम्स मिल का पुत्र था। इसकी शिक्षा एडिननरा में हुई थी। जे.एस.मिल बचपन से ही बड़ा प्रतिभाशाली था और उसने 08 वर्ष की अवस्था में ही प्लेटो एवं अरस्तु के पुस्तकों का अध्ययन कर लिया था। अतः प्रारम्भ से ही वह सृजनशील था। उसकी राजनीतिक अर्थशास्त्र में विशेष रुचि थी। रिकार्डो, ग्रोटे और बेंथम जैसे विद्धान इसके मित्र थे। बड़ा होकर ईस्ट इंडिया कम्पनी में क्लर्क के रुप में भर्ती हुआ और अपनी प्रतिभा के बल पर वह भारत के संस्कृति एवं सभ्यता के प्रति प्रभावित हुआ और अपने विचारों को एक दिशा प्रदान की।

पुस्तकेः–'हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इण्डिया' (1818)'ऑन लिबर्टी' (1859)'द सब्जेक्शन ऑफ वोमेन' (1869)

'जेम्स मिल का भारत के प्रति विचारः–जेम्स मिल का पुत्र जेम्स स्टुअर्ड मिल 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' के क्लर्क के रुप में भारत आया था और यहाँ आकर 'ब्रिटिश भारत का इतिहास' नामक ग्रन्थ की रचना की। इस पुस्तक में प्रारम्भिक काल कसे 18वीं शताब्दी के अन्त तक का भारत का इतिहास लिखा मिलता है। पुस्तक की प्रशंसा करते हुए मैकाले ने लिखा है कि 'गिबन के बाद यह अंग्रेजी भाषा की सबसे महान कृति है। प्रो0 एच0 एच0 विल्सन ने लिखा है कि यह मिल के कठोर परिश्रम का प्रतिफल है। जेम्स स्टुअर्ड

मिल भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के प्रति द्वेष की भावना रखता था। इसने हिन्दुओं से मुसलमानों को अच्छा बताया है। यह हिन्दुओं के प्रति उदारता की भावना रखने वाले अंग्रेजों को सम्मान नही देता था। इसने यूरोपियों को हिन्दुओं से सभी अर्थो में श्रेष्ठ माना है। इसने भारतीय संस्कृति विरोधी भावना से अपना इतिहास लेखन का महान इतिहासकार कहा जाता है। इतिहास दर्शन की प्रवृत्ति को उसने प्रतिपादन भी किया था। अतएव उसके भारत विरोधी होने के बाद भी भारत के आधुनिक इतिहासकारों में उसे सम्मान का स्थान दिया जाता है।

4.2.3 लियोपोल्ड वान रांके (179571886)

लियोपोल्ड वान रांके का जन्म सन् 1795 ई0 में एक मध्यमवर्गीय सम्पन्न परिवार में हुआ था। उनके पिता एक वकील थे। उन्होंने अपनी संतान का पालन–पोषण बहुत ही अच्छे ढंग से किया था। 1814 ई0 में उसने अध्ययन कार्य हेतु लिपजिंग विश्वविद्यालय मे ंप्रवेश लिया और पी0एच0डी0 की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद अपनी जीविका का साधन अध्यापन कार्य बनाया। उसने फ्रेंकफ में ग्रीक एवं लैटिन पढ़ाने का कार्य आरम्भ किया और बर्लिन विश्वविद्यालय में भी अध्यापन कार्य किया था।

ग्रंथ एवं पत्रिकाः–'हिस्ट्रीज ऑफ रोमन्स एण्ड टिटोनिक' 'आटम एण्ड दि स्पेनिश मोनार्क ऑफ दि सिक्सटीन्थ एण्ड सेवेन्टीज सेंचुरी' 'द हिस्ट्री ऑफ रिवोलूशन इन सर्बिया' 'हिस्ट्री जेटश्रिफ्ट' पत्रिका 'द हिस्ट्री ऑफ पोप्स' 'पर्शियन हिस्ट्री' 'जर्मनस हिस्ट्री' 'इंगलिश हिस्ट्री' 'यूनिवर्सल हिस्ट्री' (1880)

इतिहास दर्शनः–लियोपोल्ड वान रांके ने कहा है कि ऐतिहासिक घटनाओं के सर्वोत्तम स्रोत अभिनेताओं के साक्ष्य हैं न कि इतिहासकारों के उपाख्यान। उसने लिखित दस्तावेजों के महत्व को मानने एवं उनका मूल्यांकन करने पर बल दिया है और बतलाया कि इसके लिए लेखक के व्यक्तित्व का अध्ययन करना चाहिए और यह देखना चाहिए कि उसने किन स्रोतों के आधार पर

लिखा है। इन सिद्धान्तों का प्रयोग करके रांके ने यह प्रमाणित किया है कि अनेक स्रोतों जो पहले अतिप्रमाणिक समझे जाते थे वे सर्वथा विश्वसनीय नहीं थे। रॉके का लेखन कार्य मुख्यतः राजवंशों, युद्धों और संधियों के संदर्भ में था किन्तु राज्य, धर्म, संस्कृति आदि के सामान्यीकरण पर वे ध्यान नहीं दे पाये थे। उनमें वैज्ञानिक प्रवृत्ति का अभाव था और वे पूर्णतः पूर्वाग्राही थे।

रॉके के दृष्टिकोण में विश्व का इतिहास केवल निच्छिन्न घटनाओं का समष्टिमात्र नहीं है। इस दृष्टि से रॉके की विश्वइतिहास की अवधारणा उसके समकालीन जर्मन आर्दशवादी धारणा से बहुत पृथक नहीं है। वह विश्वास नहीं करता था कि ऐतिहासिक घटनाएँ कुछ क्रमबद्ध रुप से घटा करती हैं। इससे सर्वथा स्पष्ट है कि रॉके केवल घटनाओं के यथार्थ वर्णन से ही इतिहास नहीं समझता, यद्यपि घटनाओं के यथावत वर्णन को ही वह महत्वपूर्ण समझता है।

4.2.4 जनरल अलेक्जेण्डर कनिंघम (1814—1893):—

जनरल अलेक्जेण्डर कनिंघम का जन्म 23 जनवरी सन् 1814 ई0 में लंदन में हुआ था। इन्होंने क्राइस्टस हॉस्पिटल से शिक्षा प्राप्त की थी। क्राइस्टस हॉस्पिटल एक बोर्डिंग स्कूल है। अलेक्जेण्डर कनिंघम एक प्रसिद्ध पुरातत्वविद्व थे। वे भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के प्रथम डायरेक्टर थे। कनिंघम महोदय भारत में ब्रिटिश सेवा के रुप में आए। जो यहाँ पर ब्रिटिश सेना के बंगाल इंजीनियर ग्रुप में इंजीनियर थे। जो बाद में भारतीय पुरातत्व, ऐतिहासिक भूगोल तथा इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान के रुप में प्रसिद्ध हुए। इनको भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग का जनक माना जाता है। जॉन स्टुअर्ट मिल जहाँ प्राचीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का परिहास किया और कहा कि यूरोपीय इतिहास की तुलना में यह कुछ भी नहीं है, वहीं कनिंघम ने यहाँ के प्राचीन पुरातत्व को विश्व के इतिहास हेतु विश्लेषित करने पर बल दिया था। सन् 1863ईद्ध में लार्ड केनिंग के सम्मुख इन्होंने

भारतीय पुरातत्व का महत्व प्रस्तुत किया था, जिसके फलस्वरुप इनकों 450रु0 वेतन और 250 रुपया भत्ता पर सर्वेक्षक के पद पर नियुक्त कर दिया गया था।

प्रमुख पुस्तकें:–'द एनसिएन्ट जियोग्राफी ऑफ इण्डिया' (1871)'द स्तूप ऑफ भरहुत' (1879) 'बुक ऑफ इण्डियन इराज' (1883) 'क्वाइन्स ऑफ एनसिएन्ट इण्डिया फ्रॉम द अर्लियस्ट टाइम्स डाउन टू द सेवेन्थ सेन्चुरी' (1891)

अलेक्जेण्डर कनिंघम महोदय ने अनुभवों को इन पुस्तकों में वर्णित किया था–'कार्पस इंसाक्रिपसन्स इण्डिकेरम', 'अशोक के अभिलेख, भारत के सिक्के, भारतीय सम्बतों की पुस्तक, पुरातात्विक सर्वेक्षण विवरण, भिलसा स्तूप, बोधगया आदि। इनके अतिरिक्त इन्होंने अनेक लेख, नोट्स सुझाव भी लिखे जो शासकीय अभिलेखागार में सुरक्षित हैं।

इतिहास दर्शनः–अलेक्जेण्डर कनिंघम का इतिहास–दर्शन तथ्यों एवं साक्ष्यों से भरा पूरा है। वे निराधार कोई बात नहीं करते। अपने इतिहास लेखन में उन्होंने पुरातात्विक साक्ष्यों को ही आधार बनाया था और कवित्व शैली से बहुत दूर रहे थे। किन्तु उनके पुरात्व का क्षेत्र बहुत व्यापक था। उनके अनुसार पुरातत्व मात्र टूटी हुई मुर्तियों, पुराने भवनों तथा टीलों के ध्वंसावशेषों तक सीमित नहीं हैं अपितु विश्व–इतिहास से सम्बद्ध सभी वस्तुओं को समेटती है। वे पुनः कहते हैं कि प्राचीन पुरावशेषों को प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं अपितु उनकी वास्तविक स्थिति का अंकन और विवरण का सही संदर्भो में प्रस्तुत किया जाना भी आवश्यक है। उनका विचार था कि जो भी पुरानवशेष हम प्राप्त करते हैं उनको विश्व–इतिहास के संदर्भ में प्रस्तुत करें। उन्होंने सुझाव दिया कि पुरावशेष प्राचीन भारत के व्यावहारिक जीवन परम्परा प्रथा आदि को कितना प्रकाशित करते हैं, इसकी वस्तुपरक व्याख्या भी होनी चाहिए।

4.2.5 विन्सेन्ट आर्थर स्मिथ (1843–1920):–

अलेक्जेण्डर कनिंघम की भॉति भारतीय इतिहास में स्नेहानुराग रखने वाले यह दूसरे विदेशी व्यक्ति थे। उनका जन्म 03 जून 1843 ई0 में डबलिन में हुआ था। वे आयरिश थे और अपने पिता की 13 संतानों में से पॉचवें थे। उनके पिता एक्विल स्मिथ प्राचीन अवशेषों में अभिरुचि रखा करते थे, जिसका प्रभाव आगे चलकर उनके पुत्र विन्सेन्ट आर्थर स्मिथ पर भी दृष्टिगोचर होता है। विन्सेन्ट आर्थर ने एम0ए0 तक की शिक्षा ट्रिनटी कालेज डबलिन से ही प्राप्त की और आक्सफोर्ड से डी0लिट0 किया था। 1871ई0 में वे आई0सी0एस0 की परीक्षा पास कर चुके थे। उनका विवाह स्लीगो के विलियम किल्फोर्ड की पुत्री मेरी एलिजाबेथ से हुआ था, जिससे उनको तीन पुत्र तथा एक पुत्री थी।

प्रमुख रचनाएँ:–'अशोक द बुद्धिस्ट इम्परर ऑफ इण्डिया''द अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' 'कैटलॉग ऑफ द क्वायन्स इन इण्डियन म्यूजियम''ए हिस्ट्री ऑफ फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सीलोन' 'द ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया'

इतिहास दर्शन:–स्मिथ का इतिहास दर्शन व्यावहारिक पक्ष प्रस्तुत करता हुआ दिखायी देता है। उनके अनुसार इतिहास का मूल्य और रुचि विशेषतः उस आधार पर निर्भर करती है कि अतीत के द्वारा किस सीमा तक वर्तमान उद्भाषित होता है। इतिहास की उपयोगितावादी व्यावहारिक अवधारणा का अर्थ बतलाते हुए वे कहते हैं कि वर्तमान के ज्ञान के लिए अतीत का एक साधन के रुप में प्रयोग किया जाना चाहिए और भविष्य का नियोजन यह अर्थ रखता है कि उसके लिए इतिहास का व्यावहारिक उपयोग किया जाय।

स्मिथ की ऐतिहासिक पद्धति आधुनिक थी, किन्तु उन्होंने पश्चिमी विचारों से प्रभावित तत्वों को अनावश्यक रुप में इतिहास शास्त्र में भरने का प्रयास किया था फिर भी उनकी यह एक विशेषता ही थी कि उन्होंने साहित्य, ब्राह्मण, बौद्ध, जैन धर्मो के मिथ तथा आख्यानों को अपने इतिहास को तिथि

क्रम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया। उनकी ऐतिहासिक पद्धति में वंशावली और नरेशों का विवरण मात्र ही नहीं मिलता अपितु उन्होंने उनका परीक्षण और विश्लेषण भी किया है।

स्मिथ वस्तुतः एक इतिहासकार थे। इस सम्बन्ध में प्रो0 बी0के0 मजूमदार लिखते हैं कि ''एक इतिहास के रुप में स्मिथ का व्यक्तित्व वैज्ञानिक और कलाकार का एकत्र समन्वित था। वे एक वास्तविक अन्वेशषक थे और विषय की गम्भीरता और कार्य कारण सिद्धान्त पद्धति उनकी मुख्य विशेषता थी,जो एक इतिहासकार के लिए नितान्त आवश्यक है। भारत के 18वीं सदियों की मुख्य घटनाओं को विवरण प्रस्तुत कर स्मिथ ने पश्चिमी देशों को भारतीय इतिहास से अभिज्ञ कराने का अद्‌भुत प्रयास किया था। उन्होनें जो भी कुछ लिया समीक्षात्मक और विश्लेषणात्मक लिखा। इससे भारतीय इतिहासकारों को दिशा बोध में बहुत सुविधा मिली।

4.2.6 रॉबिन जार्ज कालिंगवुड (1889–1943):–

रॉबिन जार्ज कालिंगवुड का जन्म 22 फरवरी 1889ई0 में कार्टमेल ग्रेंज ओवर सैंड्स, लंकाशायर में हुआ था। इन्होंने आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त की थी और वहीं भौतिक दर्शन के प्रोफेसर नियुक्त हुए थे। कलिंगवुड पर अनेक विद्धानों का प्रभाव पड़ा था। प्रारम्भ में उन्होंने ग्रीन और ब्रेडले के आदर्शवादी विचारों को स्वीकार किया, परन्तु बाद में अपने नये इतिहास दर्शन का विकास किया। प्लेटों को वह अपना प्रिय दार्शनिक मानता था साथ ही विको का प्रभाव अपने पर अधिक मानता था।

शोध पत्रः– रॉबिन जार्ज कालिंगवुड के अनेक शोध पत्र लिखे थे। इन्हीं शोध–पत्रों का संग्रह उनकी मृत्यु के बाद सन् 1945ई0 में पाँच भागों में 'द आइडिया ऑफ हिस्ट्री' नाम से प्रकाशित हुआ है। जिसके चार भागों में तो अन्य विचारकों के सिद्धान्त का आलोचनात्मक अध्ययन है, जबकि पॉचवें भाग में उनके अपने विचार प्रतिपादित हैं।

इतिहास दर्शनः—रॉबिन जार्ज कालिंगवुड ने समस्त इतिहास को विचार प्रधान इतिहास स्वीकार किया है। उनका कहना है कि इतिहास मनुष्य को कार्य करने के लिए प्रेरित, प्रोत्साहित और विवश भी करता है। यह मानवीय कार्यो का उद्गम स्थल है, इसलिए वे इतिहास का अभिप्राय मानवीय मस्तिष्क से प्रभावित विश्व को समझने से लगाते हैं। इतिहास को मनुष्य की कृति मानते हैं और कहते है कि अतीतकालिक मनुष्य के कार्यो को समझने के लिए इतिास सूत्र प्रदान करता है। ज्ञान को दो भागों में विभक्त करते हुए वे कहते हैं कि प्रकृति का परिचय कराने वाले ज्ञान हो इतिहास कहते हैं। इतिहास में मानवीय कार्यो का अध्ययन है। प्रकृति विज्ञान तथा धर्मशास्त्र की भॉति इतिहास मे विचार प्रधान होता है। एक स्थान पर कॉलिंगवुड ने लिखा है कि इतिहास एक अद्विितीय प्रकार का ज्ञान है तथा यह मानव के सम्पूर्ण ज्ञान का स्रोत है।

इतिहास की उपयोगिता के विषय में कॉलिंगवुड का कहना है कि इससे आत्मज्ञान प्राप्त होता है। इससे ने केवल अन्य लोगों से अपनी विशिष्टताओं की जानकारी होती है अपितु मनुष्य के रुप में अपने स्वभाव को जानने में भी यह सहायता मिलती है। इसमें जब वह यह समझने का प्रयास करता है कि वह क्या कर सकता है तो इसके लिए यह समझना आवश्यक हो जाता है कि उसने क्या किया और इसका ज्ञान उसे इतिहास कराता है इसलिए मनुष्य के लिए सर्वथा हितकर विषय है। कालिंगवुड के इतिहास दर्शन को महत्व देते हुए उनको 20वीं सदी का महान दार्शनिक, इतिहासकार माना गया है।

4.2.7 एडवर्ड हैलेट कार (1892—1982):—

एडवर्ड हैलेट कार का जन्म सन् 1892 ई0 में लंदन में हुआ था। मर्चेण्ट टेलर्स स्कूल लंदन और ट्रिनटी कॉलेज कैम्ब्रिज में शिक्षा प्राप्त करने के बाद 1916 से 1936 ई0 में विदेश विभाग से त्यागपत्र देकर यूनिवर्सिटी

कॉलेज ऑफ वेल्स एबेरीस्वाइट्ज के अंतर्राष्ट्रीय राजनीति विभाग में विल्सन प्रोफेसर का पद ग्रहण किया। 1941 से 1946 ई0 तक 'द टाइम्स' के सह सम्पादक रहें।

प्रमुख रचनाएँः—'हिस्ट्री ऑफ सोवियत एशिया' (1950)'इण्टरनेशनल रिलेशन बिट्विन टू वर्ल्ड वार' (1947)'द न्यू सोसायटी' (1951)'व्हाट इज हिस्ट्री' (1961)

इतिहास दर्शनः—एडवर्ड हैलेट कार मानते हैं कि अतीत की घटनाओं के क्रमबद्धता देना तथा कारण और परिणाम के पारस्परिक सम्बन्धों को क्रम से प्रस्तुत करना ही इतिहास है। वस्तुतः इतिहास इतिहासकार तथा तथ्यों के बीच अन्तः क्रिया की अविच्छिन्न प्रक्रिया तथा वर्तमान और अतीत के बीच अनवरत परिसंवाद है तो इसे अतीत की घटनाओं और उभरते हुए भावी परिणामों के बीच अनवरत परिसंवाद की संज्ञा दी जा सकती है।

इतिहास अतीतकालिक तथा वर्तमानकालिक समाज के बीच संवाद है। इतिहास में अतीत और वर्तमान को सम्पृक करनेवाला एक सेतु है। इतिहासकार इस सेतु का डाट एवं प्रकाशस्तम्भ है जो इस सेतु के माध्यम से सम—सामयिक समाज को अतीत के उन तथ्यों की जानकारी देता है जो वर्तमान को प्रकाशित तथा नियंत्रित कर सके और सुखद भविष्य के निर्माण में सहायक होकर मार्गदर्शन कर सके। प्रो0 ई0एच0 कार ने इतिहास लेखन के विषय में बताया है कि वह अतीत के परिकल्पनात्मक पुनर्निमाण का एकमात्र साधन है। इसको व्याख्याप्रधान बनाने के लिए इतिहासकार ऐतिहासिक तथ्यों का चयनशीलात्मक स्वरुप आवश्यक मानता है।

4.3 सारांश

इतिहास की उपयोगिता के विषय में कॉलिंगवुड का कहना है कि इससे आत्मज्ञान प्राप्त होता है। इससे ने केवल अन्य लोगों से अपनी विशिष्टताओं

की जानकारी होती है अपितु मनुष्य के रुप में अपने स्वभाव को जानने में भी यह सहायता मिलती है। यूरोप में इतिहास लेखन का कार्य क्रमबद्ध रुप से चरणबद्ध तरीके से किया जाता था। और उन्हीं की देन है कि आज इतिहास का एक स्वतंत्र विषय के रुप में अध्ययन किया जाता है। उन लोगों ने धर्म, दर्शन, राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र आदि जो भी विषय अपनी लेखनी चलाने हेतु चयन किया उन सब में ऐतिहासिक व्याखाएँ प्रस्तुत की थीं और इसलिए उनके इतिहास दर्शन का क्षेत्र अत्यधिक लोकप्रिय, विस्तृत एवं वैज्ञानिक हो चला था।

4.4 शब्दावली

- **अलेक्जेण्डर कनिंघम**–पुरातत्व के जनक

4.5 बोध प्रश्न

1 इतिहास लेखन की पाश्चात्य परम्परा के आयामों का वर्णन करें।

....

....

4.6 सहायक ग्रन्थ

1 श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011

2. बुद्वप्रकाश, इतिहास दर्शन,प्रयाग,1962

इकाई 05 . भारतीय इतिहास लेखन का यूरोपियन मत

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 प्राच्यवादियों का भारतीयो के प्रति दृष्टिकोण

5.3 यूरोपियन इतिहासकारों का भारतीय इतिहास लेखन के प्रति दृष्टिकोण

5.4 सारांश

5.5 शब्दावली

5.6 बोध प्रश्न

5.7 सहायक ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेगे–

- भारतीय इतिहास पर यूरोपीय इतिहासकारों के दृष्टिकोण के विषय में।

5.1 प्रस्तावना

18वी सदी से ही यूरोप के प्रतिमानों के आधार पर भारत के इतिहास लिखने के प्रयास किये गये। यह काल प्रबोधन का काल था। यूरोप के कई विचारको ने औपनिवेशिक दृष्टिकोण की तीव्र आलोचना एवं विरोध भी किया था। भारत में इस परम्परा का सूत्रपात प्राच्यवाद से उद्भूत दिखाई देता है। जिसके अन्तर्गत भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को भारतीय दृष्टिकोण से देखने का प्रयास किया गया है। प्राच्यवादियो में विलियम जोन्स, हेनरी कोलब्रुक एच.एल.बिल्सन तथा जेम्स प्रिन्सेप आदि प्रमुख है। इनके द्वारा भारतीय इतिहास के विषय में वर्णन किया गया। इनके द्वारा यूरोप के मध्यकाल की तरह भारतीय के इतिहास की तुलना की गई। 19 वीं सदी में यूरोप में आधुनिक इतिहास लेखन का प्रारम्भ माना जाता है। इतिहास में तथ्य की सत्यता का विशेष महत्व होता है। जिसके आधार पर अतीत का विवरण प्रस्तुत किया जाना चाहिए। धीरे–धीरे स्रोतों के अन्तर्गत अनेक पक्षों को सम्मिलित किया गया। यूरोपियन इतिहासकारों के द्वारा यह कहा जाता रहा है कि भारतीय ऐतिहासिक विवरण कई खण्डों में विभाजित है। भारत आगमन से पूर्व उन्होने भारत की अव्यवस्था एवं बर्वरता का उल्लेख किया था। कई यूरोपियन इतिहासकारों ने कहा किय भारतीय इतिहास विभिन्न लोगों तथा संस्कृतियों के मध्य होने वाले संघर्ष की कहानी है। जिसमें विभिन्न प्रजातियां आपस में संधर्ष करती रहती है। भारतीय इतिहास लेखन परम्परा को लेकर यूरोपीय इतिहासकारों का दृष्टिकोण भारतीय परम्परा एवं मूल्यों के विपरीत बताया गया है। उनका मत था कि भारतीयों में इतिहास समझ का अभाव है। उनके द्वारा जो भी इतिहास के विषय में बताया गया है वह केवल कथाओ, मिथको का संग्रह मात्र है।

5.2 प्राच्यवादियों का भारतीयो के प्रति दृष्टिकोण

यह स्वीकार किया जाता है कि प्राच्यवादियों के द्वारा भारतीय इतिहास के अनेक अनछुऐ पक्षो का रहस्योद्घाटन इनके द्वारा किया गया था। इस कड़ी में एशियाटिक सोसाइटी के द्वारा भारतीय संस्कृति एवं विस्मृत स्मारकों के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करना महत्वपूर्ण कार्य था। इस सोसाइटी के द्वारा अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थों का हिन्दी तथा संस्कृत में अनुवाद करवाया गया था। चार्ल्स विल्किन्स के द्वारा भगवतगीता तथा हितोपदेश का अनुवाद किया गया। विलियम जोन्स से मनुस्मृति का अंग्रजी में अनुवाद किया। जोन्स के द्वारा यूनानी विवरणों वार्णित सैंड्रोकोटस की पहचान चन्द्रगुप्त नामक महान शासक से किया था। इसके साथ ही जेम्स प्रिसेंप के द्वारा अशोक की ब्राह्मी लिपि का लिपयन्तरण करना इतिहास की निश्चित रूप से महत्वपूर्ण की घटना है।

5.3 यूरौपियन इतिहासकारों का भारतीय इतिहास लेखन के प्रति दृष्टिकोण

अनेक यूरोपीय इतिहासकारो का मत था कि भारतीय संस्कृति अच्छी नही है। इस क्रम जेम्स मिल का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। उसका मानना था कि भारतीय इतिहास का विभाजन धर्म के आधार पर किया जाना चाहिए। इसलिए उसने इतिहास का विभाजन प्राचीन काल को हिन्दू काल के आधार पर,मध्यकाल को मुस्लिम काल आधार तथा ब्रिटिश काल को आधुनिक काल के आधार पर किया था। उसने हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया नामक छः भागो में विभाजित पुस्तक की लिखा था। जेम्स मिल के द्वारा भारत के विषय में जिस प्रकार की बातों का उल्लेख किया है। यह उसकी भारतीय संस्कृति को सम्यक ढंग से न समझ पाने कारण हुआ था। उसने भारत की यात्रा कभी नही की थी। केवल विदेशी विवरणो के आधार पर ही भारत के विषय में विवरण दिया है। राबर्ट ओर्म भारत के प्रथम औपनिवेशिक इतिहासकार माने जाते थे। औपनिवेशिक इतिहास लेखन में जेम्स मिल का नाम अग्रणी है। उसने अपनी प्रसिद्व पुस्तक हिस्ट्री आफ ब्रिटिश इण्डिया जो कि छः भागों

में विभाजित है। उसने भारतीय इतिहास को तीन भागों में विभाजित किया था। उसने साहित्य के क्षेत्र में अनेक भारतीयो की दक्षता की आलोचना किया है। उसने यहां के राजाओं तथा पुरोहितों की आलोचना किया है। वह कहता है कि इस प्रकार के क्रिया कलाप मानव समाज को दासता की ओर ले जाता है। उसके विवरण का निष्कर्ष यह है कि वह भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को कमतर मानता है। एलिफिन्स्टन दूसरे महत्वपूर्ण लेखक थे। वे एक कुशल प्रशासक तथा विद्वान थे। उन्हे भारतीय समाज,साहित्य की अच्छी समझ थी। उसने जेम्स मिल के द्वारा भारतीयो के विषय में दिये गये विवरण की आलोचना भी करता है। उन्होने भारत की ज्ञान परम्परा का वर्णन किया था। इसके साथ ही उसने यहां की गुरू परम्परा का भी वर्णन किया है। उसने अपनी पुस्तक हिस्ट्री में अनेक नैतिक पक्षों एवं नीतियों का वर्णन किया है। उसका वर्णन भारत के प्रति निरपेक्ष दिखाई देता है। विन्सेन्ट आर्थर स्मिथ को मार्क्सवादी इतिहासकार माना जाता है। जेम्स मिल के बाद भारत के सर्वाधिक महत्वपूर्ण इतिहासकार के रूप में मान्यत प्राप्त है। उनकी सर्वाधिक प्रसिद्व पुस्तक अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया है। तथा दूसरी प्रसिद्व पुस्तक आक्सफोर्ड हिस्ट्री आफ इण्डिया है। इसके अलावा हिस्ट्री आफ फाइन आटर्स इन इण्डिया एंड सीलोन है। उन्होने ने भारतीय इतिहास को निरेपक्ष दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। उसने यह विवरण दिया है कि भारतीय राजाओं की शासन व्यवस्था अत्यन्त श्रेष्ठ व्यवस्था के रूप में प्रसिद्व है।

5.4 सारांश

भारत में यूरोपियन इतिहासकारों के द्वारा भारतीय इतिहास लेखन को अनेक दृष्टिकोणों से प्रस्तुत किया गया है। उनके द्वारा भारतीय इतिहास लेखन को जानने तथा भारतीय इतिहास को यूरोपीय शैलियों में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया था। इतिहासकारों में इतिहास लेखन को लेकर अनेक मत–मतान्तर दृष्टिगत होता है। उनके द्वारा भारत के विषय में प्रस्तुत विवरण का कालान्तर में राष्ट्रवादी इतिहासकारों के द्वारा तर्को एवं तथ्यों के आधार

पर खण्डन किया गया। औपनिवेशिक इतिहास लेखन भारत में औपनिवेशिक शासन व्यवस्था की स्थापना पर बल देते है।

5.5 शब्दावली

- **सैंड्रोकोटस**– चन्द्रगुप्त मौर्य

5.6 बोध प्रश्न

1 यूरोपियन इतिहास लेखन के प्रमुख आयामों का वर्णन कीजिए।

....
....
....

2 जेम्स मिल के भारतीय इतिहास पर विचार का वर्णन करें।

....
....
....
....

.3 विन्सेन्ट आर्थर स्मिथ के विचारों का वर्णन करें।

....
....

5.7 सहायक ग्रन्थ

1. पाण्डे, गोविन्द चन्द, इतिहास, स्वरूप एवं सिद्वान्त, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
2. चौबे, डॉ. झारखण्डे, इतिहास–दर्शन, विश्वविद्यालय, प्रकाशन, वाराणसी।
3. सिंह, डॉ.परमानन्द, इतिहास–दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
4. ई. श्रीधरन, इतिहास लेख, ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

Uttar Pradesh Rajarshi Tandon
Open University

MAHY-111

इतिहास दर्शन एवं लेखन
सिद्धान्त एवं प्रवृत्तियाँ
(भाग–एक)

खण्ड
3

इतिहास लेखन की परम्पराएँ

इकाई– 1

यूनानी इतिहास लेखन 93

इकाई– 2

चीनी इतिहास लेखन 104

इकाई– 3

ईसाई इतिहास लेखन 112

इकाई– 4

भारतीय इतिहास लेखन 119

इकाई– 5

20 वीं शताब्दी से वर्तमान तक का इतिहास लेखन 129

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,प्रयागराज

इतिहास दर्शन एवं लेखन : सिद्धान्त एवं प्रवृत्तियाँ

परामर्श समिति

प्रो0 सीमा सिंह — माननीया कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

कर्नल विनय कुमार — कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — निदेशक, समाज विज्ञान, विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य,इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
इकाई- 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10,11,12,13,14,15 (खण्ड 1,2,3)

प्रो0 एम0 पी0 अहिरवार — आचार्य, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
इकाई- 1,2,3,4,5, (खण्ड 5)

डॉ0 रमाकान्त — सह आचार्य, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
इकाई- 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10 (खण्ड 4, 6)

सम्पादक

प्रो0 विजय बहादुर सिंह यादव — आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले रूहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली (इकाई 1 - 30)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रित वर्ष - 2023

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. - 978-93-94487-55-0

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठयसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट :पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आमड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायीं नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से कर्नल विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित **2024.**

मुद्रक :चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा. लि. 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज.

इकाई : 01 –यूनानी इतिहास लेखन

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 यूनानी इतिहास लेखन की परम्परा

1.3 यूनानी इतिहास लेखन की विशेषताएं

1.4 लोगोग्राफी का उदय

1.5 प्रमुख यूनानी इतिहासकार

1.5.1 हिकेटियस

1.5.2 हेराडोटस

1.5.3 थ्यूसीडाइडीज

1.5.4 पोलिबियस

1.5.5 जेनोफोन

1.5.6 हेसियड

1.6 सारांश

1.7 शब्दावली

1.8 बोध प्रश्न

1.9 सहायक ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेगें–

- यूनानी इतिहासकारों के विषय में जानकारी प्राप्त करेगें।
- इतिहास लेखन के क्षेत्र में यूनानियों के दृष्टिकोण को जानेगें।
- यूनानी इतिहास लेखन के प्रमुख तत्वों के विषय में।

1.1 प्रस्तावना

विश्व की प्राचीन संस्कृतियों में यूनान की संस्कृति का महत्वपूर्ण स्थान है। इतिहास लेखन में यूनानियों का महत्वपूर्ण योगदान है। इतिहास मानव विकास यात्रा का क्रमबद्व संकलन है। इतिहास में सामाजिक आवश्यकताओं एवं मूल्यों के अनुसार परिवर्तन होना स्वाभाविक है। यूनानी लेखकों का ध्यान समकालीन लेखन के साथ साहित्यिक रचना पर ज्यादा केन्द्रित था।

1.2 यूनानी इतिहास लेखन की परम्परा

इतिहास लेखन की परम्परा एवं प्रविधियाँ प्रत्येक देश और काल में सांस्कृतिक परिस्थितियों एवं मूल्यों के आधार पर विकसित होती रही है। विश्व की प्राचीन संस्कृतियों में यूनान की संस्कृति का महत्वपूर्ण स्थान है। इतिहास लेखन के क्षेत्र में उनका योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अतीत के सम्बंध में यूनानियों की रूचि एक लम्बे समय तक ट्रोजन युद्ध तथा उस युद्ध से जुड़े नायको के बारे में प्रचलित आख्यानों और मिथको तक ही समिति थी। अनेक लेखकों ने इन गाथाओं को व्यवस्थित रूप देने का भी प्रयास किया। इतिहास को लिपिबद्ध करने की जागरूकता जब यूनानियों में उत्पन्न हुई तब अपना प्रारम्भिक इतिहास उन्होने पूर्णताः निश्चित रूप से यूनानियों में इतिहास लेखन प्रारंम्भ किया यह कहना कठिन है। 600ई0पू0 के अन्त के पहले सम्भवतः किसी व्यक्ति में भी ऐतिहासिक घटनाओं को लिपिबद्ध करने

का प्रयास नहीं किया एवं प्रथम इतिहास ग्रंथ जो आज पूर्णतः सुरक्षित है। यूनान में हिस्तोरे शब्द का प्रयोग आपसी विवाद को निपटाने के अर्थ में प्रयोग हुआ है। यूनान में काल्पनिक ज्ञान को डोक्सा एवं वास्तविक ज्ञान को एपिस्टोमी कहा जाता था। यूनान की इतिहास परम्परा का विकास इन्ही परम्पराओं के आधार पर विकसित एवं प्रचलित रहा है। यूनानी इतिहास परम्परा में हेसियड नामक इतिहासकार ने युग चक्र का सिद्वान्त का प्रतिपादन का आधार चार धातुओं के आधार पर किया था जिसका विवरण निम्नवत है–

1. **स्वर्ण युग**– यह वह युग था क्रोनोस का स्वर्ग में शासन स्थापित था। मानव एवं देवताओं के मध्य समन्वय एवं साथ–साथ कार्य किये जाने का विवरण प्राप्त होता है।

2. **रजत युग**– यह युग हीनता की ओर अग्रसर हो रहा था। मानव पतन की ओर अग्रसर हो रहा था। मानव के मन–मस्तिष्क में देवताओं के प्रति उदासीनता का भाव पैदा होने लगा था।

3. **कांस्य युग**– यह युग मानवीय मूल्यों एवं गुणों के पतन का काल था। मानव के मन में दया,करूणा आदि जैसे मूल्यो का अभाव था।

4. **लौह युग**–यह युग ट्राय एवं थेबीज के युद्वों में लोगों ने प्रतिभाग किया था। इस युग का मानव दुःखों से युक्त नही था।

युगचक्र का यह सद्वान्त एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह सिद्वान्त लगभग सभी संस्कृतियों में कुछ परिवर्तनों के साथ प्राप्त होता है। भारतीय परम्परा में यह सिद्वान्त कृत, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग नामक चार युगों में विभाजित है।

1.3 यूनानी इतिहास लेखन की विशेषताएं

यूनानी इतिहास परम्परा में साक्षात वृत्तान्तों के विवरण को महत्व दिया जाता था। परम्परा, कालक्रम तथा साक्षात्कार को भी स्रोत के रूप में प्रयोग किया जाता था। अभिलेख एवं परम्पराओं को भी स्रोत माना जाता था। यूनानी घटनाओं का रिकार्ड रखने का प्रयास किया जाता था।

1.4 लोगोग्राफी का उदय

विश्व इतिहास में छठी शताब्दी ई.पू. एक महान क्रान्तिकारी परिवर्तन के लिए प्रसिद्व है जिसमे यूनानी चिन्तन कल्पना प्रधान के स्थान पर चिन्तन प्रधान की ओर अग्रसर होने लगा था। यूनानी परम्परा में पुरोहितों, न्यायाधीशों, एवं उच्च अधिकारियों की तालिकाओं, राजाओं की वंश परम्परा आदि लेखों को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने की प्रवृति प्रबल होने लगी थी। यूनानी चिन्तन परम्परा में प्राचीन विश्वासों को तर्को के आधार पर परीक्षण करने की प्रक्रिया का सूत्रपात दिखाई देता है। लोगों में तर्क एवं सत्य के आधार पर घटनाओं को स्वीकार करने की प्रबल प्रवृति दिखाई देती है। यह काल निश्चित रूप से अनेक दृष्टियो से बौद्विक परिवर्तन का काल था, जहाँ प्राचीन मूल्यों एवं मान्यताओं के स्थान पर तर्क एवं वैज्ञानिकता पर बल दिया गया था। यूनान में प्रत्यक्ष अनुसंधान के महत्व पर बल दिया गया एवं इतिहास के मूल अर्थ पर बल दिया गया, जो सरल गद्य में नगरों, लोगों, मंदिरों आदि के अनुभव से संबंधित मौखिक परंपराओं और जनश्रुतियों को प्रस्तुत करते है। इस शैली में लिखने वाले को लोगोग्राफर कहा जाता था। हेकाटियस, हेलेनिकस शारोन और डायोनिसियस महत्वपूर्ण लोगोग्राफर हुए। लोगोग्राफर मिथक से इतिहास में संक्रमण के बिंदु पर स्थित है। उनकी प्रस्तुति का विषय स्थानीय मिथक होता था। सार्वजनिक उत्सवों के अवसर पर लोगोग्राफर की कलात्मक रचनाओं का सार्वजनिक एवं कलात्मक शैली में

वाचन होता था। पांचवी सदी ई.पू. में हेरोडोटस और थ्यूसीडाइडिस के कार्यो में लोगोग्राफी पूर्ण इतिहास के रूप में विकसित दिखाई देती है।

1.5 प्रमुख यूनानी इतिहासकार

1.5.1 हिकेटियस

मिलेटस के हेकेटियस का जन्म ई.पू. 549–466 में हुआ था। उसके द्वारा लिखित प्रथम कृति 'विश्व का पर्यटन' है जिसमें फारस यात्रा का वर्णन है। उसकी द्वितीय कृति 'स्थानीय वंशावालियों' का ग्रंथ में प्राचीन आख्यानों की आलोचना प्रस्तुत की गयी है। इसकी दोनों पुस्तकें उसके द्वारा प्रतिपादित इतिहास लेखन के दो सिद्धान्त (i) सच्चाई। (ii) पारम्परिक आख्यानों का आलोचनात्मक परीक्षण। हेकेटियस के स्वयं के शब्दों में, ''मैं उसी चीज को लिखता हूँ जिसे मैं सत्य समझता हूँ क्योंकि यूनानियों की अनेक कहानियाँ है जो मुझे हास्यास्पद लगती है'' वस्तुतः हेकेटियस की उक्त दोनों कृतियां मूलतः इतिहास के रूप में प्रतिस्थापित भले ही न हो पाई हो मगर इतिहास तत्व की रक्षा इसमें निहित है। हेकेटियस यूनान का पहला इतिहासकार है जिसने इतिहास लेखन में आधुनिक इतिहास लेखन का मार्ग प्रशस्त किया। उसने पद्य की अपेक्षा गद्य में इतिहास लेखन के महत्व को बल प्रदान किया है। उसने इतिहास लेखन को एक नई दिशा प्रदान किया।

1.5.2 हेरोडोटस

यूनानी चिन्तन परम्परा एवं इतिहास के जनक हेरोडोटस का जन्म 480 ई.पू. एशिया माइनर के हेलिकारनेसस के एक उच्च परिवार में हुआ था। उच्च कुलीन परिवार में जन्म होने के बाद भी उन्हे देश से निष्कासित कर दिया गया था। उसने सर्वप्रथम हिस्ट्री शब्द का प्रयोग अनुसंधान अथवा गवेषणा के अर्थ में किया था। यूनानी जाति की अद्ष्य ज्ञान पिपासा और अनुसंधित्सा हिस्ट्री की परिभाषा से प्रथम बार प्रस्फुटित हो उठी। उसने अपने

ऐतिहासिक विवरण में संसार के भिन्न–भिन्न राष्ट्रो के इतिहास का विवरण दिया है। उसकी इतिहास सम्बन्धी अवधारणा मानववादी थी। वह कार्यो के पीछे मानवीय क्रिया–कलापों के महत्व को स्वीकार करता है। आर.जी. कालिंगवुड के अनुसार हेरोडोटस ने प्राकृतिक नियमों को इतिहास में प्रधानता दी। उन्होनें मानवीय कार्य व्यापार को प्रकृति, भौगोलिक परिस्थिति एवं वातावरण के सापेक्ष में भी देखने की कोशिश की। अपने विवरणों को अधिक सरल बनाने के लिए उसने कथा, कहानियाँ एवं आख्यानों का भी सहारा लिया था। यही कारण है कि आज भी हेरोडोटस को कथात्मक इतिहास का विद्वान तथा आदर्श माना जाता है। उन्होने अपने ग्रंथ हिस्टोरिका का मुख्य विषय यूनानियों द्वारा महान पारसीक साम्राज्य का पराजय चुना। इस विषय की विस्तारपूर्वक विवेचना के लिये वह युद्ध से साठ वर्ष की घटनाओं के वर्णन से इतिहास प्रारंभ करता है। ग्रंथ के प्रथम अर्द्वभाग में पारसीक साम्राज्य के उदय के वर्णन के साथ–साथ एशिया, मिस्त्र, मध्य एशिया और लीबिया में निवास करने वाली विभिन्न जातियों की रीति–रिवाजों का भी उल्लेख मिलता है। ग्रंथ के दूसरे भाग में उसने 499 ई0पू0 के आयोनियन विद्रोह से लेकर 479ई0पू0 में पर्शियन राजा जरक्सीज के यूनान आक्रमण तक पारसीक यूनान संघर्ष का विवरण मिलता है। विभिन्न रीति–रिवाजों अनुष्ठानों धार्मिक विश्वासों आदि के सम्बंध में जो भी सूचनाएँ उसे प्राप्त होती थी। वह उन्हे वैसा ही सामान्यतः प्रस्तुत कर देता था। एक स्थल पर वह कहता है कि यह मेरा कर्तव्य है कि जो भी सूचनाएँ मुझे दी जाती है, मैं उन्हे आपके समझ प्रस्तुत करूँ एवं उस पर विश्वास किया जाये अथवा नहीं उससे मुझे कुछ लेना–देना नहीं है। वह भारत की एक जनजाति का विवरण देता है जिनके इतने बड़े कान होते थे जिससे वे अपने सम्पूर्ण शरीर को लपेट लेते थे। मानव के द्वारा किये गये कार्यो के पीछे विद्यमान कारणों की खोज उसके इतिहास लेखन में दृष्टिगत होता है। उसने तथ्यों की छानबीन किये बिना मात्र कानों से सुनकर घटनाओं का संकलन किया। उसकी दृष्टि आलोचनात्मक थी।

1.5.3 थ्यूसीडाइडीस

यूनान की इतिहास लेखन परम्परा में थ्यूसीडाइडिस का महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय स्थान है। उसकी इतिहास दृष्टिकोण हेरोडोटस से अलग थी। उसने इतिहास लेखन में काव्यगत एवं अलौकिकता का अभाव दृष्टिगत होता है। यही कारण है कि यूनानी इतिहास लेखन की परम्परा में थ्यूसीडाइडीस को हेरोडोटस का उत्तराधिकारी नहीं माना जाता है। आर.जी. कालिंगवुड के अनुसार हेरोडोटस इतिहास के जन्मदाता हो सकते है। मगर मनोवैज्ञानिक इतिहास के जनक थ्यूसीडाइडिस ही है। उसने तथ्यो की यथार्थता पर बल देते हुए इतिहास में विश्वसनीयता लाने का आग्रह किया। जहाँ इतिहास के जनक हेरोडोटस का आग्रह रोचक विधि से घटनाओं के प्रस्तुतिकरण में था, वही थ्यूसीडाइडिस ने इतिहास के शिक्षात्मक पहलू पर जोर दिया। इतिहास लेखन की परम्परा में थ्यूसीडाइडिस का सर्वप्रमुख योगदान यह है कि उसने अपने इतिहास लेखन में एक प्रणाली विज्ञान का अनुप्रयोग किया। वह स्वयं को मुख्य विषय पर केन्द्रित रखता था, तथ्यों का संकलन कर मुख्य विषय से सम्बद्ध तथ्यों का चयन करता था। प्रो. शाटवेल के अनुसार ''थ्यूसीडाइडिस तथ्यों के जगत में परिभ्रमण करता था।'' वस्तुतः आज भी कई विद्वान तथ्य को इतिहास मानते हैं। 19वीं शताब्दी तो तथ्यों की दृष्टि से महान थी, उस समय तो एक 'तथ्य सम्प्रदाय' ही अस्तित्व में था। वर्तमान में भी तथ्यो के महत्व से इन्कार नहीं किया जा सकता। ऐसे में आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व थ्यूसीडाइडिस द्वारा इतिहास लेखन में तथ्यों को प्रधानता देना निश्चित रूप से सराहनीय है। उसने अपना ध्यान पूर्णतः समकालीन इतिहास लेखन पर केन्द्रित किया। विभिन्न महत्वपूर्ण स्रोतों से सामग्री एकत्रित करके उसने स्पार्टा और एथेंस के मध्य हुये पेलोपोनेशियन युद्ध के प्रथम बीस वर्षो का विवरण दिया। इतिहास लेखन के अपने उद्देश्य के विषय में लिखता है कि कथा कहना मेरा उद्देश्य नही है। उसके अभाव में सभवतः पढ़ने वाले को मेरी रचना रोचक न लगे। कितु यदि मेरी कृति का मूल्यांकन एक भी ऐसे

व्यक्ति के द्वारा किया जाता है जो घटी हुई घटना की सत्यता की गहराई में जाने के साथ–साथ यह भी जानने के लिये उत्सुक है कि भविष्य में वही परिस्थितियों पुनश्य उत्पन्न होने पर क्या होगा। मैं अपने परिश्रम को सार्थक स्वीकार करूँगा। पेलोपोनेशियन युद्ध के प्रारम्भ के समय थ्यूसीडाइडीज एथेंस में था। एथेंस की ओर से समुद्री सेना के नायक के रूप में भी लड़ा था। पेलोपोनीशियन युद्ध के दौरान स्पार्टा के सेनापति ब्रासिदास ने बिना किसी विरोध के सरलता से ऑफीपोलिस पर अधिकारी स्थापित कर लिया था। एथेसवासियों ने इस पराजय के लिये दोषी थ्यूसीडाइडीज को ठहराया जो उस समय अपनी नौसेना के साथ थोसोस में था। 424ई0पू0 में उसे निर्वासित कर दिया गया। लगभग 20 वर्ष तक वह इधर–उधर घूमता रहा। निर्वासन काल ने उसे पेलोपोनेसियन युद्ध में एथेंस के शत्रु स्पार्टा और उसके सहयोगी राज्यों की यात्रा का अवसर प्रदान किया। इस अवसर का लाभ थ्यूसीडाहडीज ने अपने इतिहास ग्रन्थ की सामग्री संलकन के लिये उठाया। उस प्रकार पेलोपोनेसियन युद्ध में भाग लेने वाले दोनों पक्षो के दृष्टिकोण को निकटता से जानने के कारण तथ्यों का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण करने में उसे सहायता मिली। हेरोडोटस ने जहॉ अपने इतिहास ग्रन्थ में होमर की परंपरा को अपनाकर सरल सुग्राहा और रोचक वर्णन को प्राथमिता दी। थ्यूसीडाइडीज ने दार्शनिकों, वक्ताओं और समकालीन नाटककारों का अनुसरण कर सारगार्भित शैली को प्रधानता दी। उसका उद्देश्य घटना के कारण विकास और परिणाम को प्रस्तुत करना था। परिणाम को वह भाग्य और देवी कारणों से नहीं बल्कि ऐतिहासिक कारणों से जोड़ता था। हेरोडोटस ने विभिन्न मानव समुदायों की संस्कृति पर भी लिखा किन्तु थ्यूसीडाइडीज के बल राजनीतिक और सामारिक घटनाओं के वर्णन से संतुष्टि था। दोनों इतिहासकारों को इतिहास लिखने में अपने निर्वासन का लाभ मिला। आधुनिक युग के मानदण्ड से भी थ्यूसीडाइडीज एक वैज्ञानिक इतिहासकार माना जायेगा।

1.5.4 पालिबियस

पालिबियस इतिहास लेखन की ग्रीको–रोमन परम्परा का प्रमुख प्रतिनिधि था। उसका जन्म 198 ई0 पू0 यूनान के मोगालोपोलिस नामक स्थान पर हुआ था। कालान्तर में 168 ई0 पू0 पिडना के एक युद्व में युद्धबन्दी के रूप में उसे रोम ले जाया गया। रोम में पहुँचकर सीपियो के सम्पर्क में आने के पश्चात ही उसे इतिहास लेखन की प्रेरणा प्राप्त हुई। एवं इतिहास रचना का कार्य प्रारम्भ किया। उसने अपनी कृति 'इतिहास जो कि 40 जिल्दों में है, में 164 ई0 पू0 तक रोमन साम्राज्य के इतिहास और संवैधानिक विकास पर अपना यह ग्रन्थ इतिहास लिखा है। इसमें रोम एवं यूनान दोनो राज्यों के तथ्यपरक एवं निष्पक्ष इतिहास की जानकारी प्राप्त होती है। उसके लेखन में तथ्य एवं सत्य पर बल दिया गया है। तथ्यो की प्रामाणिकता एवं तटस्थता का भाव उसके लेखन में दिखाई देता है। पालिबियस ने इतिहास की अवधारणा को सार्वभौमिक माना है। उसका मानना था कि अतीत की घटनाओं से शिक्षा लेकर मनुष्य अपने चरित्र से सुधार कर सकता है। वह भाग्य के स्थान पर मानवीय इच्छाशक्ति की प्रबलता में विश्वास करता था। उसके अनुसार जीवन में सुख–दुःख काल एवं परिस्थितियों पर आधारित होता है। वह इतिहास में युग चक्रवादी सिद्वान्त के महत्व को स्वीकार करता है।

1.5.5 जेनोफोन

जेनोफोन एक महत्वपूर्ण इतिहास लेखक हुआ। उसकी प्रमुख रचना एनाबेसिस है जिसमे संस्मरण का विवरण प्राप्त होता है। उसके द्वारा लिखित पुस्तक हेलोनिका में 411ई. से 363ई. तक की घटनाओं का वर्णन है। जेनोफोन ने अनेक ग्रथं लिखे। राजनीतिक इतिहास के क्षेत्र में उसकी रचना अनावासिस का उल्लेख किया जा सकता है। इस ग्रथं में उसने पोखोपीनी सोस युद्ध का वर्णन जहॉ थ्यूसीडाइडीज ने छोड़ा था वहॉ से प्रारम्भ कर 362ई0पू0 तक की घटनाओं का उल्लेख किया है। उसका यह ग्रथं नीरस

इतिवृत्त के रूप में है जिसमें मात्र युद्धों की अविछिन्न श्रृखंला तथा विजयों और पराजय का वर्णन है।

1.5.6 हेसियड

हेसियड यूनान का महत्वपूर्ण लेखक है जिसके अध्ययन का मुख्य विषय धर्म रहा है। उसने ईश्वर के जन्म एवं जनता के प्रति व्यवहार का वर्णन अपनी पुस्तक में किया है। उसने सर्वप्रथम चार धातुओं के आधार चार युग चक्र सिद्वान्त की परिकल्पना किया था। इतिहासकारों की कृतियों के साथ–साथ यूनान के प्रारम्भिक इतिहास की रचना के लिये हेसियड द्वारा रचित दो काव्य ग्रंथों तथा अनगिनत अवशिष्ट काव्याशों का उल्लेख किया जा सकता है। इस रचना से हमें सातवी शताब्दी ई0पू0 की यूनानी मानसिकता का पता चलता है।

1.6 सारांश

यूनान का इतिहास–लेखन के क्षेत्र एक अद्वितीय योगदान है। यूनान में बौद्विक क्रियाकलापों की अभिव्यक्ति के साधन के रूप में इतिहास नामक ज्ञान की एक श्रृंखला की उत्पत्ति हुई। लेखन की परम्परा अनेक इतिहासकारों के काल में विकसित हुई। इतिहासकारों ने इतिहास को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों एवं घटकों का वर्णन किया है।

1.7 शब्दावली

- **हिस्तोरे**– आपसी विवाद को निपटाने के अर्थ में प्रयोग हुआ है।
- **डोक्सा**–काल्पनिक ज्ञान
- **एपिस्टोमी**–वास्तविक ज्ञान

1.8 बोध प्रश्न

1. यूनान में इतिहास लेखन परम्परा के विभिन्न आयामों का वर्णन करें।

....

....

2. इतिहास लेखन मे यूनानियों के योगदान का वर्णन करें।

....

....

3. हेरोडोटस के इतिहास–लेखन की दृष्टिकोण का वर्णन करें।

....

....

4. थ्यूसीडाइडीज के इतिहास दर्शन का वर्णन करें।

....

....

5. पालिबियस के इतिहास लेखन पर टिप्पणी लिखें।

....

....

1.9 सहायक ग्रन्थ

1 श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011

2. बुद्वप्रकाश, इतिहास दर्शन, प्रयाग, 1962

3. सिंह परमानन्द, इतिहास दर्शन,मोतीलाल बनारसी दास,नई दिल्ली, 2010

4. पाण्डे, गोविन्द चन्द्र,इतिहासःस्वरूप और सिद्वान्त,राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर, 2019

5. ,ई.एच.,इतिहास क्या है,अनु.अशोक चक्रधर मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड,नई दिल्ली,1993

इकाई : 02 – चीनी इतिहास लेखन

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रस्तावना

2.1 उद्देश्य

2.2 चीनी इतिहास लेखन की परम्परा

2.3 चीनी इतिहास लेखन की विशेषताएं

2.4 प्रमुख चीनी इतिहासकार

2.4.1 कन्यूसियस

2.4.2 सूमा चियन

2.5 सारांश

2.6 शब्दावली

2.7 बोध प्रश्न

2.8 सहायक ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

शिक्षार्थी अध्ययन के उपरान्त जान सकेगें–

- चीनी इतिहास लेखन की परम्परा के विषय में।
- चीनी इतिहास लेखन के प्रमुख तत्वों के बारे में।
- प्रमुख चीनी इतिहासकारों के विषय में।

2.1 प्रस्तावना

चीन की सभ्यता संसार की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक मानी जाती है। चीनी चिन्तन परम्परा में ली की अवधारणा अत्यन्त प्रासंगिक है। ली का प्रयोग प्रारम्भ में केवल अनुष्ठानात्मक कार्यो के लिए किया जाता था। बाद में इसका अर्थ अनेक सन्दर्भो में लिया जाने लगा था। सुखी एवं व्यवस्थित जीवन के लिए ली का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। चीन के इतिहास में दो प्रमुख तत्वों का विशेष स्थान है (1) उपयोगितावादी चीनी दर्शन (2) चीनी संस्कृति का केन्द्र मनुष्य तथा समाज। चीनी संस्कृति में अतीत के प्रति अत्यन्त प्रबल आस्था का संकेत मिलता है। उनके अनुसार प्रत्येक मनुष्य को अपनी परम्परा तथा मूल्य से परिचित होना चाहिए। चीनी परम्परा में यह मान्यता है कि मनुष्य के अन्दर दो प्रकार की आत्माएं निहित है। (1) पो–यह शव के साथ कब्र में रहती है। (2) हुन–यह थ्यान के महत्व की ओर बढ़ती है। चीनी संस्कृति की प्रकृति तथा समाज विषयक दृष्टिकोण ऐतिहासिक है। थ्यान के आदेश तथा उनके अनुसार चिन तथा याड़ की प्रक्रियाएं इतिहास में गतिमान होती है। कन्फ्यूशियस ने इतिहास की पृष्ठभूमि में अपनी विचारधारा को प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार प्रकृति तथा समाज की विकासशील व्यवस्था इतिहास में परिलक्षित होती है। चीनी दृष्टि के अनुसार इतिहास एक नैतिक प्रक्रिया है। प्रत्येक राजवंश ने अपना पूर्ण वृत्त सुरक्षित रखा है। चीनी इतिहास लेखन में किसी प्रकार का बाहरी प्रभाव

दृष्टिगत नही होता है। चीनी विचारधारा को प्रभावित करने और इतिहास के व्यवहार के अनुकूल बनाने में परिस्थितियों की बहुत भूमिका रही है।

2.2 चीनी इतिहास–लेखन की परम्परा

चीनी चिन्तन परम्परा में ली की अवधारणा अत्यन्त प्रासंगिक है। ली का प्रयोग प्रारम्भ में केवल अनुष्ठानात्मक कार्यो के लिए किया जाता था। बाद में इसका अर्थ अनेक सन्दर्भो में लिया जाने लगा था। सुखी एवं व्यवस्थित जीवन के लिए ली का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। चीनी इतिहास लेखन के स्रोत एवं प्रणाली अत्यन्त प्रामणिक तथा प्रासंगिक है। इन स्रोतों के आधार पर चीन के इतिहास तथा संस्कृति का सम्य्क निरूपण किया जा सकता है। चीन सभ्यता संसार की प्राचीनतम सभ्यताओं में एक है जिसकी परम्परा एवं अतीत के प्रति एक प्रबल आस्था एवं विश्वास दृष्टिगत होता है। तत्कालीन अनेक अभिलेखों एवं साहित्यिक स्रोतों के आधार पर इतिहास लेखन में सहायता मिलती है। अभिलेख से जहाँ एक ओर राजाओं की साम्राज्य–विस्तार की जानकारी प्राप्त होती है, वही दूसरी तरफ उनके विचारो की भी जानकारी प्राप्त होती है। यूरोपीय इतिहास लेखन की परम्परा पर चीन की साहित्यिक परम्परा अत्यन्त मानक के रूप में दृष्टिगत होती है। बिल डयूरा ने लिखा है कि चीन में इतिहास उद्योग से उठकर कला का दर्जा नही पा सका। सू–मा–चियन आदि जैसे अनेको चीनी इतिहासकारों ने शैली की सुदरता की चिन्ता नही की और उन्हे अपनी ऊर्जा सत्य पर खर्च की सुदरता वे लिए कुछ नही छोड़ा। शायद यह सोच कर कि इतिहास को विज्ञान होना चाहिए। कला नहीं।

2.3 चीनी इतिहास लेखन की विशेषताएं

चीनी इतिहास लेखन की परम्परा अत्यन्त प्रबल रही है। इतिहास लेखन के क्षेत्र में अनेक विविध विधाओं एवं पद्वतियों का समावेश दिखाई देता है। इतिहास लेखन के क्षेत्र में अनेक परिवर्तन एवं प्रकार दृष्टिगत होते है।

2.4 प्रमुख चीनी इतिहासकार

2.4.1 कनफ्यूशियस (551–478ई0ई0)

चीनी प्राच्य विद्या का जनक सू–मा–चियन को माना जाता है। इसका जन्म 145 ई.पू. में हुआ था। उसका पिता वू–ती के दरबार में ज्योतिषी के रूप में कार्य करता था। वह बचपन से ही अत्यन्त कुशाग्र बुद्दि का बालक था। उसे बचपन से ही प्राचीन ग्रन्थों एवं पुस्तकों को पढ़ने का शौक था जिसके कारण उसने प्राचीन धर्म ग्रन्थों को कंठस्थ कर लिया था। उसकी प्रतिभा से प्रभावित होकर उसके पिता की मृत्यु के बाद उसे वू–ती के दरबार में ज्योतिषी के रूप में नियुक्त किया गया। उसने 100 ई.पू. में इतिहासकारों का दस्तावेज नामक एक ग्रन्थ का प्रणयन किया। इस ग्रन्थ के प्रणयन में उसने अनेक प्राचीन ग्रन्थों से प्राप्त ज्ञान किया तथा यात्रा–भ्रमण के दौरान प्राप्त अनुभवों के आधार पर इस ग्रन्थ को अन्तिम रूप दिया। इस ग्रन्थ में उसने चीन के प्रारम्भिक काल से लेकर अपने समय तक की घटनाओं का विस्तार से वर्णन किया है। इस ग्रन्थ में राजनीतिक इतिहास तथा आर्थिक तत्वों के साथ महत्वपूर्ण व्यक्तियों के जीवन गाथाओं का वर्णन किया गया है। चीनी लोग अपना इतिहास 300ई0पू0 तक पुराना होने का दावा करते है, लेकिन 776ई0पू0 के पहले की घटनाएँ पूर्णतया प्रमाणिक नही मानी जा सकती। अतीत के लिए श्रद्धा बढ़ाने और पूर्वजों द्वारा प्रस्तुत उदाहरण के प्रति सम्मान पैदा करने के लिए कनफ्यूशियस ने इतिहास की महत्ता पर विशेष बल दिया। उसके पाठ्यक्रम में विषय थे, इतिहास, काव्य और नैतिक शिष्टाचार के नियम आदि सम्मिलित थे। उसने स्वलिखित और संपादित फाइव चिंग या धर्म वैधानिक सिद्धान्त नामक ग्रन्थ विरासत के रूप में छोड़ा, जिन्हे अब भी स्वर्ण युग को प्रतिबिम्बित करने वाला ग्रन्थ माना जाता है। इनमें दो पुस्तको को पाँचवी व छठी का ऐतिहासिक कृति माना जाता है। चौथी पुस्तक चुन चिय या स्प्रिंग एंड और ऐनल्स कनफ्यूशियस के अपने राज्य लू0 में 722–484 ई0पू0 की अवधि में जिनमें बारह डयूको के शासन

काल का संक्षिप्त वृतात है। ऐनल्स नैतिक शिष्टचार की दिशा निर्देशक पुस्तक भी थी। पाँचवी पुस्तक शूचिंग या बुक ऑफ हिस्ट्री या बुक ऑफ डॉक्युमेटस राजकीय भाषणों आदेश पत्रों संस्मृतियों, सामंती अभिलेखों आदि का संग्रह है। इसके आधार पर महान गुरू ने अपने शिष्यों को प्रारम्भिक शासनों की महत्वपूर्ण घटनाओं के लिए प्रेरित करने की कोशिश की थी। कन्फ्यूशियस की दृष्टि में इसी युग में वीर और निःस्वार्थी नायको ने चीन में एकता स्थापित कर उसे सभ्य बनाया जैसे महान राजा बनाया जिसने सौ साल तक राज किया। लेकिन कन्फ्यूशियस को ऐसा इतिहाससकार नही माना जा सकता जो अतीत का वर्णन करता हो क्योंकि वह अपने लेखन में नैतिक और बुद्धिमानी को प्रोत्साहन देने के लिए काल्पनिक भाषाणों और कहानियों का सहारा लेता था। वह जनश्रृति और इतिहास को जान बूझकर चुनी हुई कहानिये के जरिये अपने शिष्यों को प्रेरित करने के भाव से देश के अतीत का आदर्श चिन्तन वाला शिक्षक था। लेकिन इतिहास की प्रतिष्ठा बढ़ाकर उसने उसके अध्ययन और लेखन को बढ़ावा दिया। चीन में इतिहास लेखन एक प्रतिष्ठित गतिविधि बन गया था। और कनफ्यूशियस तथा महान स्जूमा चियन के बीच के 400 सालो में उसमें तीव्र प्रगति हुई। इस काल के दो कार्यो का उल्लेख किया जा सकता है। इनमें पहला व्जो–चुआन है जो कनफ्यूशियस की मृत्यु के 100 साल बाद उसकी बुक ऑफ हिस्ट्री को समझाने और जीवंत बनाने के लिए लिखी गई टिप्पणी है। दूसरी किताब पैपल ऑफ द बम्बू बुक्स बेई के एक राजा के मकबरे में मिली।

2.4.2 सू–मा–चियन

सु–मा–चियन को चीनी इतिहास का जनक कहा जाता है। उसका जन्म 145 ई.पू. में हुआ था। वह बचपन से ही प्राचीन शास्त्रों के प्रति अत्यन्त आकृष्ट था। उसने इतिहासकार का दस्तावेज नामक ग्रन्थ लिखा था। इस ग्रन्थ में उसने राजनीतिक घटनाओं, आर्थिक तत्वों सहित अनेक महत्वपूर्ण पक्षों पर प्रकाश डाला है। कन्फ्यूशियस ने चीनी इतिहास को एक उच्च

नैतिक स्थान तथा स्वर दिया जिसने नव–कनफ्यूशियस दार्शानिको को प्रेरित किया कि निकट अतीत के यथार्थ की कीमत पर नैतिक मानदण्डों पर जोर दे। इसके विपरीत अतीत के यथार्थ और इतिहास एवं नौकरीशाही के संबंध में शाक्तिग्रहण करने वाला इतिहासकार होता था। कनफ्यूशियस के अनुसार नौकारशाही और शासक समूह के स्वार्थो की सेवा करने वाला इतिहास घातक हो सकता है। लेकिन सावधान संगठन और सामग्रियों के बचाव पर नौकरशाही के जोर देने से हमारे पास व्यौरेवार सुगठित स्रोत शेष रह पाए है। स्जूमा चियन अतीत के यथार्थ पर आधारित इतिहास की का जनक थी।

हान सम्राट वू के दरबार में प्रतिष्ठित इतिहासकार ज्योतिषी स्जूमा तान का बेटा सूमा चियन था। प्रशासनिक सेवा में प्रवेश के पूर्व युवा स्जूमा ने अनेक यात्राएं की। प्रमुख इतिहासकार ज्योतिषी के रूप में वह अपने पिता का उत्तराधिकारी बना। उसके पिता की अन्तिम अंतिम इच्छा थी कि उसका बेटा उसके द्वारा आरम्भ किए गए ऐतिहासिक अभिलेख को पूरा करें। लेकिन तब संकट आ पड़ा जब एक पराजित सेनापति की सहायता के कारण उसे सम्राट वू के क्रोध का शिकार बनना पड़ा। मृत्यु के एवज में स्जूमा चियन ने बधियाकरण की सबसे खराब सजा कबूल की ताकि वह शिह ची को पूरा करने के लिए जीवित रह सके। उसने पहले पंचांग मे ंसुधार कि और जब जो कार्य पिता ने सौपा था उसे पूरा करने में जुट गया। उसके सर्वश्रेष्ठ कार्य शिह जी (ऐतिहासिक अभिलेख) में 5,26,000 चीनी चित्र लिपि इकाईयां है जिन्हे बाँस की तख्तियों पर धैर्यपूर्वक उकेरा गया है।

2.5 सारांश

चीनी की तरह किसी अन्य देश ने अतीत का इतना विशाल निरंतर विविधि और यथा तथ्य व्यौरा की तरह नही रखा है। इसमें शाही इतिहास, स्थानीय और राजवंशो के इतिहास गजर, चीन पर निर्भर राज्यों के इतिकृत चीन में बसे गैर चीनी लोगों के इतिहास विदेश संबधों के इतिहास और चीनी

जीवन के विभिन्न पक्षो के विशेषज्ञ इतिहास शामिल है। फिर भी ऐतिहासिक मामलों में तुलना के लिए ही सही यूरोपीय इतिहासकारों और इतिहास के दार्शनिक ने चीन पर विचार करने की कृपा नही की हीगेल की फिलॉस की ऑफ हिल्टी 1830 ने पूर्व की शाश्वत जड़ता की चर्चा कर चीनी सभ्यता की जड़ और अप्रगतिशील प्रकृति के बारे में पश्चिम की थीसिस को क्लासिक अभिव्यक्ति दी। रैंक ने चीन को इतिहास के दायरे से यह कुछ कर बहिष्कृत कर दिया कि चीनी स्रोत मिथकीय अप्रामाणित, द्वितीयक या आश्रित और चीनी भाषा नही जानने वाले लोगों के लिए अनुपलब्ध है।

2.6 शब्दावली

हुन—यह ध्यान के महत्व की ओर बढ़ती

शिह जी (ऐतिहासिक अभिलेख)

2.7 बोध प्रश्न

1. चीनी इतिहास लेखन के विभिन्न चरणो का वर्णन कीजिए।

....

....

2. इतिहास लेखन पर सू–मा–चियन के दृष्टिकोण का वर्णन कीजिए।

....

....

3. चीनी इतिहास लेखन की वर्तमान स्थिति का वर्णन कीजिए।

....

....

2.8 सहायक ग्रन्थ

1 श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011

2. बुद्वप्रकाश, इतिहास दर्शन,प्रयाग,1962

3. सिंह परमानन्द, इतिहास दर्शन,मोतीलाल बनारसी दास,नई दिल्ली,2000

4. पाण्डे,गोविन्द चन्द्र,इतिहासः स्वरूप और सिद्वान्त,राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर,1973

5. कार, ई.एच.,इतिहास क्या है,अनु.अशोक चक्रधर मैकमिलन इण्डिया लिमिटडे,नई दिल्ली,1993

इकाई : 03 – ईसाई इतिहास लेखन

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 ईसाई इतिहास लेखन की परम्परा

3.3 ईसाई इतिहास लेखन की विशेषताएं

3.4 प्रमुख इतिहासकार

3.4.1 सन्त अगस्तायन

3.4.2 पॉलस ओरोसिपस

3.4.3 सन्त जेरोमे

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 बोध प्रश्न

3.8 सहायक ग्रन्थ

3.0 उदेश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेगें–

- ईसाई इतिहास लेखन की परम्परा के विषय में।
- ईसाई इतिहास लेखन के प्रमुख तत्वों के विषय में।
- प्रमुख इसाई इतिहासकारों के विषय में।

3.1 प्रस्तावना

ईसाई इतिहास लेखन परम्परा का आरम्भ यूनान के इतिहास लेखन से माना जाता है। ईसाई इतिहास लेखन में ओल्ड टेस्टामेंट का महत्वपूर्ण स्थान है। ईसाई धार्मिक परम्परा में इस ग्रन्थ को अत्यन्त पवित्र एवं पूज्यनीय माना जाता है। ईसाई धर्म के प्रचार–प्रसार के फलस्वरूप इसका स्थान धर्म में ग्रहण कर लिया। ईसाई परम्परा का इतिहास लेखन यहूदियों के इतिहास लेखन की अपेक्षा काफी उच्चकोटि का था। किन्तु विधर्मी संस्कृति की निन्दा के बावजूद भी ईसाई उनके ऐतिहासिक दर्शन से काफी प्रभावित थे। यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि ईसाई धर्म में परिवर्तन के पहले उनकी शिक्षा–दीक्षा विधर्मी संस्कृति में हुई थी। कुछ ईसाई पादरी शास्त्रीय भाषा का प्रयोग भी करते थे।

3.2 ईसाई इतिहास लेखन की परम्परा

प्रारम्भिक ईसाई लेखको ने इतिहास की प्रक्रिया में एक दैवीय योजना की कल्पना की जिसमें मनुष्य और देवता समान रूप से भाग लेते थे। उन्होंने उसमें एक वास्ताविक गरिमा की कल्पना की जिसमें मानव की सृष्टि से लेकर उसके विमोचन तक की अवधि का अध्ययन किया जाता है। संत आगस्तायन ने अपनी पुस्तक देवनागरी में नेकी और बदी की शक्तियों के बीच संघर्ष की चर्चा की वस्तुतः उसने इसके माध्यम से विधर्मियों और ईसाईयों के बीच का संघर्ष बतलाया। उसका विचार था कि इस संघर्ष में

ईसाईयों की विजय होगी। ईसाई इतिहासकारों ने यूनानी और रोमन इतिहासकारों की प्रणलियों को त्याग दिया। उन्होंने कागजातों को देखने में यूनानीयों की आलोचनात्मक पद्वति को नही अपनाया और गहन अर्थ की व्याख्या के लिए धार्मिक साहित्य का सहारा लिया। दूसरे शब्दो में उन्होंने इतिहास की व्याख्या में रूपक कथा का सहरा लिया। इस पद्धति कें मूलपाठ और अर्थ में विभिन्नता होती है। इस कोटि में ग्रेगोरी की पुस्तक 'Commentary on the book of Job' और इसीडोर की पुस्तक 'Alegorial quaedam sacrae scripture' का उल्लेखनीय है। इन ईसाई लेखकों में ऐतिहासिक दस्तावेजों की दो भागों में पवित्र और अपवित्र विभक्त किया है। इन्हें हम धार्मिक व धर्म–निरपेक्ष भी कहते है। ईसाई लेखको ने धार्मिक इतिहास पर अधिक ध्यान दिया। धार्मिक इतिहास के विवरण में देवी धरनाओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। प्रो. शॉट वेल ने कहा है, "यह दुःखद घटना थी कि इतिहास–लेखन में दैवी घटनाओं को स्थान दिया गया। इसमें वैज्ञानिक पद्धति का दम घुट गया। 19वी शाताब्दी में ही पुनः अपनाई गई" ईसाई इतिहासकारों ने यहूदियों के पवित्र ग्रंथो को सराकरी दस्तावेज के रूप में ग्रहण किया। उसके सामने ईसाई धर्म की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करने की समस्या 36 खड़ी हुई। अतः उन्होंने अतीत के इतिहास का अध्ययन करने और गैर–यहूदी इतिहासकारों द्वारा धर्म की अपेक्षा करने के प्रश्नों पर ध्यान दिया।

.3.3 ईसाई इतिहास लेखन की विशेषताएँ

1. ईसाई इतिहासकारों ने विश्वजनीन इतिहास की रचना की है। यह गैर यहूदी विद्वानों के संकलन से भिन्न था। इस संकलन की पृणभूमि में यह दिखलाना था कि विविध तिथि परक घटनाओ ने ईसा के जन्म का प्रतिमान प्रस्तुत किया। ईसा के जन्म के पूर्व और पश्चात तिथिपरक घटनाओं का विवरण किया जाने लगा।

2. ईसाई इतिहासकारों की कृतियों में परमात्मा का विधान एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। ये किसी कारण की व्याख्या मानवीय विवके के आधार पर नही अपितु घटनाओं के पूर्व–निर्धारण के आधार पर करते है। प्रो0 कॉलिगवुड ने इसे बड़े ही अच्छे ढंग से कहा हैरू देवी इतिहास को ईश्वर कृत एक नाटक बदलाता है लेकिन यह एक ऐस नाटक है जिसका कोई पात्र प्रेणता का प्रिय पात्र नही है।
3. ईसाई लेखक ईसा के जीवन पर विशेष महत्व देते है और सारी घटनाओं को इससे जोड़ते है। उन्होने ईसा पूर्व और पश्चात् की घटनाओं की ईसा के जन्म से जोड़ा है। इसी आधार पर उन्होने इतिहास को अंधकार–युग और प्रकाश–युग में विभक्त किया है।
4. इतिहास को दो भागों में विभक्त करने बाद उन्होने इसे कई अन्य युगों या कालों में विभक्त किया प्रत्येक युग व काल की अपनी–अपनी विशेषताएँ है।

3.4 प्रमुख इतिहासकार

3.4.1 सन्त अगस्तायन

अगस्तायन चौथी सदी के उत्तरार्द्ध और पांचवी सदी के पूर्वार्द्ध में एक महत्वपूर्ण ईसाई इतिहासकार था। पहले उसकी रूचि कविता में थी लेकिन बाद में धर्मग्रन्थ में अभिरूचि लेने लगा। वह एम्ब्रोस के प्रभाव में आकर ईसाई चर्च में शामिल हो गया। उसकी प्रमुख कृति देवनगर है। यद्यपि यह कोई ऐतिहासिक कृति नही है। यथपि इसमें इतिहास लेखन की विधि के बारे में बतलाया गया है। उसने 413ई0 में इस पर काम शुरू किया। उसने यह बतलाया कि रोम में पतन के कारण रोम के देवताओं का अनादर और धर्मपरायणता का अभाव नही है। यह कृति बाईस ग्रन्थों में लिखी गई। इसमें उसने यह दिखलाने का प्रयास किया है कि दुनिया का शासन देव–दानव द्वारा होता है जिसे उसने देव राज्य और दावन राज्य कहा है। उसने दोनों

की उत्पत्ति क्रमशः Cain Abel बतलायी तथा कहा कि अंत में देव राज्य की विजय होगी। वस्तुतः उसने इस रूपक द्वारा यह स्पष्ट करना चाहा कि सत्य की विजय और असत्य की पराजय होती है।

आगस्तायन ने धर्मग्रन्थो को सहायता से अपनी कृति की रचना की। उसने चारो की पुरातन अनुश्रुति, सिसेरो के धर्म और दर्शन के सर्वेक्षण, लिवि की राम पर कृति और सालुस्ट के रोमन समान के विवरण की भी सहायता ली। यद्यपि आगस्तयन की कृति चर्च के महान पादरियों की महान कृति कही जाती है। तथापि प्रो0 शॉट बेल ने ऐतिहासिक दृष्टिकोण से इसके कुछ दोषी की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। इसमें ऐतिहासिक प्रवाह नही है। आगस्ताथन ने घटनाओं को उस रूप में नही देखा जिस रूप में वे घटती है अपितु उस रूप में देखा जिस रूप में वे उसकी योजना के अनुरूप होती है।

3.4.2 पॉलस ओरोसिपस

सन्त आगस्ताइन के बाद इतिहास लेखन में पालस ओरोसियस का स्थान महत्वपूर्ण है। वह सन्त अगस्ताइन का शिष्य था। उसकी मान्यता थी कि ईश्वर के द्वारा मनुष्य के भाग्य का निर्धारण होता है। वह पाँच वर्षो तक उसका शिष्य बना रहा। वह आगस्तायन के इतिहास के भाग्यवादी सिद्वान्त से काफी प्रभावित थां। आगस्तायन का विचार था कि गैर–यहूदी ईसाई आदि सभी के सभी ईश्वर द्वारा नियत्रित होते है। ओरोसिपस ने अपनी कृति की रचना हेरोडोटस पोलिवियस, लिवी आदि की कृतियों की सहायता ली है। उसने 411 और 418 के बीच अपनी प्रसिद्ध कृति अपने गुरू के सुझाव पर **'सेवेन बुक्स आफ हिस्ट्री अगेन्स्ट दि पैगन्स'** की रचना की थी। उसने विश्व के भौगोलिक विवरण से अपनी रचना शुरू की। प्रो. वार्ने का कथन है कि उसके मानव इतिहास में अनेक देशो के इतिहास का कोई उल्लेख नही है। आरोसियस को गैर यहूदी संस्कृति का कोई ज्ञान नही था। उसने युद्ध विभीषिकाओं, दुर्भिक्ष, भूकम्प और बाढ़ के प्रकोप आदि का वर्णन किया है।

3.4.3 सन्त जेरोमे

सन्त जेरोमे का जन्म 340ई0 में दालमेशिया में हुआ था। लगभग तीन वर्ष की अवस्था में वह धर्म की ओर अग्रसर हो गया। और सन्यासी बना गया। उसने अपनी साधना काल में अध्ययन और धार्मिक ग्रंन्थो की अध्ययन की। 1391ई0 में उसने अपनी प्रसिद्ध कृति 'De viris illustrious sive de seribtoribus eeclesiastilicis' की रचना की। इसमें उसने 130 ईसाई लेखको की आत्मकथा लिखी है। इस तरह उसने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि ईसाई धर्म में भी महान लेखक हुए है। 380 ई0 के बाद उसने यूसेबियस की पुस्तक क्रोनिकल का अनुवाद किया।

3.5 सारांश

इसाई परम्परा का इतिहास लेखन काफी उच्चकोटि का था। विधर्मी संस्कृति की बुराई के बावजूद भी ईसाई उनके ऐतिहासिक दर्शन से काफी प्रभावित थे। यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि ईसाई धर्म में परिवर्तन के पहले उनकी शिक्षा–दीक्षा ऐसी संस्कृति में हुई थी जिसका स्वरूप एवं प्रकृति अलग प्रकार की थी। धर्म को इनके इतिहास लेखन में प्रभाव सर्वाधिक दिखाई देता है।

3.6 शब्दावली

ओल्ड टेस्टामेंट– ईसाई धर्म का पवित्र ग्रन्थ

3.7 बोध प्रश्न

1. ईसाई इतिहास लेखन के विभिन्न चरणो का वर्णन कीजिए।

....

....

2. इतिहास लेखन पर सन्त अगस्तायन के दृष्टिकोण का वर्णन कीजिए।

3.8 सहायक ग्रन्थ

1. श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011.

3. सिंह परमानन्द, इतिहास दर्शन,मोतीलाल बनारसी दास,नई दिल्ली,2010

4.पाण्डे,गोविन्द चन्द्र,इतिहासः स्वरूप और सिद्वान्त,राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर, 2019

इकाई : 04 – भारतीय इतिहास लेखन

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 प्राचीन भारतीय इतिहास लेखन की परम्परा

4.2.1 वैदिक परम्परा

4.2.2 पुराण–इतिहास

4.2.3 महाकाव्य परम्परा

4.2.4 बौद्ध साहित्य

4.2.5 जैन साहित्य

4.3 इतिहासकारो का इतिहास लेखन के प्रति दृष्टिकोण

4.3.1 वाणभट्ट

4.3.2 विल्हण

4.3.3 संध्याकर नन्दिन

4.3.4 सोमेश्वर तृतीय

4.3.5 जगनिक

4.3.6 चन्द्रबरदाई

4.3.7 कल्हण

4.4 सारांश

4.5 शब्दावली

4.6 बोध प्रश्न

4.7 सहायक ग्रन्थ

4.0 उद्‌देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेगे कि–

- भारत में इतिहास लेखन की परम्परा के विभिन्न आयामों के विषय में।
- भारतीय इतिहास लेखन की परम्परा के विषय में।
- विभिन्न प्राचीन इतिहासकारों का इतिहास के प्रति दृष्टिकोण के विषय में।

4.1 प्रस्तावना

अतीत कालीन घटनाओं का क्रमबद्व एवं व्यवस्थित विवरण इतिहास कहलाता है। भारत में इतिहास को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सामाजिक अनुशासन के रूप में स्वीकार किया जाता है। इतिहास शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग अथर्ववेद में प्राप्त होता है। जहाँ उसे परम सत्ता से जोड़कर देखा जाता है। भारत में इतिहास की अपनी सशक्त परम्परा रही है। यूरोपीय इतिहासकारो के साथ–साथ कुछ इतिहासकारो के एक वर्ग का मत है कि प्राचीन भारत में इतिहास चेतना का अभाव था। भारतीय मनीषी इतिहास–लेखन के प्रति उदासीन थे। वे आध्यात्मिक तथा भौतिक जीवन की ओर ज्यादा उन्मुख थे। यही कारण है कि प्राचीन यूनान के हेरोडोटस या प्राचीन रोम के लिवी के समान प्राचीन भारत में कोई इतिहासकार नही मिलता। किन्तु यह कथन आंशिक सत्य है। किन्तु इस आधार पर यह कह देना गलत होगा कि भारत का अतीत ऐतिहासिक घटनाओं से शून्य था। .ए. के.वार्डर ने अपनी पुस्तक भारतीय इतिहास–लेखन का परिचय में कहा है ''वैदिक काल से आधुनिक काल तक भारतीय इतिहास में तारतम्यता है। अभी भी प्राचीन भारत का इतिहास पाडुलिपियों में बिखरा पड़ा है।'' डॉ.रमेश चन्द्र मजूमदार ने यह स्वीकार किया है कि प्राचीन भारतीय इतिहास–लेखन काल से सर्वथा अपरिचित नही थे। उदाहरण स्वरूप कल्हण की राजतरंगिणी में कश्मीर का इतिहास लिखा है। इस पुस्तक को लिखने के पहले उसने

कश्मीर पर उचित न केवल ग्यारह इतिहास की पुस्तको का अध्ययन किया बल्कि उसमें वर्णित ऐतिहासिक तथ्यों की अशुद्धियों को भी दूर किया। उसने राजाओ के अध्यादेशो और प्रशस्तियों का अध्ययन किया तथा तद्नुरूप ऐतिहासिक तथ्यों में सुधार किया। उसने यह भी बतलाया कि इतिहाकार को पूर्वाग्रहों से बचना चाहिए और निष्पक्ष ढंग से ऐतिहासिक तथ्यों का निरूपण करना चाहिए। इस तरह उसने इतिहास लेखन के क्षेत्र में एक मानक एवं सिद्धान्त को स्थापित किया।

4.2 प्राचीन भारतीय इतिहास लेखन की परम्परा

4.2.1 वैदिक परम्परा

इतिहास लेखन की वैदिक परम्परा अत्यन्त सशक्त एवं मूल्यपरक रही है। इतिहास के विषय में ऋषि परम्परा एवं वंशावलियों से इतिहास के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

4.2.2 पुराण –इतिहास

इतिहास–पुराण को पंचम वेद कहा गया है। पुराणों के रचनाकार लोहर्षण को माना जाता है। अमरकोश नामक ग्रन्थ में पुराणों के पाच लक्षणों का वर्णन है–सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, वंशानुचरित एवं मन्वन्तर । पुराणों की ऐतिहासिकता पर सर्वप्रथम विद्वानों का ध्यान पार्जिटर ने आकृष्ट किया था। पुराणों से अनेक राजवंशों के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। पुराण एक तरह से उपन्यास है जिनमें प्रणेता अपने पाठको में विश्वास उत्पन्न करने के लिए ऐतिहासिक तथ्यों का हवाला देते है। इसमें दो मत नही है कि पुराणो में प्राचीन राजवंशो की वंश–वृक्षावली दी हुई है। इनमें शिशुनागवंश, नंदवंश मौर्यवंश, शुगवंश आध्रवंश, गुप्तवंश का परिचय मिलता है। पुराणों की संख्या पर्याप्त है फिर भी उनमें बह्मा, पद्रा, विष्णु शिव, भागवत, अग्नि, स्कन्द, मत्स्य, गरूड, वायु आदि अठारह पुराण महत्वपूर्ण है।

4.2.3 महाकाव्य परम्परा

महाकाव्य के अन्तर्गत रामायण और महाभारत सम्मिलित है। इनमें माध्यम से भारतीय इतिहास एवं संस्कृति की झाकी प्राप्त होती है। बाल्मीकि द्वारा रचित रामायण को आदि काव्य व महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत को इतिहास माना गया है। महाभारत में सिथियन, यूनानी, बैक्ट्रियन व हूणो का उल्लेख मिलता है। महाभारत के शान्तिपर्व को इतिहास माना गया है। प्राचीन भारत के राजाओं के दरबार में सूत होते थे जो अपने संरक्षकों का सरकारी रिकार्ड रखते थे। उसका पद प्रायः पैत्रक होता था। और प्रायः ब्राह्मण ही इस पद पर थे। बाद में योद्धा वर्ग के लोग भी इस पद पर आने लगे।

4.2.4 बौद्ध साहित्य

प्राचीन भारतीय इतिहास जानने में बौद्ध साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। इनमें प्रथम स्थान जातक साहित्य का है जिनमें बुद्ध के पूर्वजन्म की गाथाएँ संकलित है। जातक साहित्य की संख्या 550 है। दूसरा स्थान त्रिपिटक साहित्य का है जिसमें बुद्ध के सिद्धान्तो व उपदेशो का वर्णन है। त्रिपिटक तीन है–सुतपिटक, विनयपिटक तथा अभिधम्मपिटक। मिलिदपन्हो नामक ग्रन्थ में बौद्व विद्वान नागसेन व राजा मिलिन्द के मध्य हुए दार्शनिक संवाद संकलन है। महावंश, ललितविस्तर, बुद्धचरित आदि ग्रन्थों से भारतीय इतिहास पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

4.2.5 जैन साहित्य

भारतीय इतिहास के निर्माण के लिए जैन साहित्य बहुत उपयोगी है। उनमें से जैन आगम सर्वोपरि है। जैन आगम में प्रसिद्ध स्थान बारह अंगो का है। जैन सूत्रो में आचारांगसूत्र कृतांग उत्तराध्ययन, कल्पसूत्र महत्वपूर्ण है। आचार्य हेमचन्द्र की रचनाओं में सर्व प्रसिद्ध कल्पसूत्र है। पद्मचरित में राम

की कथा का वर्णन है जो बाल्मीकि के रामायण से विल्कुल भिन्न है। इसमें रावण को राक्षस कहने से इंकार किया गया है। और उसे एक जादूगर बताया गया है। इसमें रावण को जैन बताया है। जैन इतिहासकारों ने भी उपाख्यानों पर आधारित इतिहास की रचना की है। इसमें कालकाबार्षा कथानक है जो एक अज्ञान इतिहासकार द्वारा लिखा गया है। इनमें विक्रमादित्य का कथानक है। इनमें शक व सिथियन का उल्लेख है जिन्हे विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त द्वितीय ने परचित किया था। विशाखदत्त ने अपने नाटक देवीचन्द्रगुप्त में शको की पराजय के कारणो का उल्लेख किया है।

4.3 इतिहासकारो का इतिहास लेखन के प्रति दृष्टिकोण

4.3.1 बाणभट्ट

भारतीय इतिहास लेखन की परम्परा में बाणभटट् का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय स्थान है। उसने हर्षचरित्र में अपने संरक्षण हर्ष का जीवन चरित्र लिखा है। यहॉ यह ध्यान देने की बात है कि हर्ष भार्गव था और इतिहास लेखन कला उसे अपने परिवार विरासत के रूप में मिली थी उसका हर्षचरित्र केवल एक इतिहास ही नही अपितु सहित्य भी है और उसे काव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसमें वाणभट्टा में ने हर्ष की जीवन घटनाओं का क्रमबद्ध उल्लेख नही किया । और साथ ही हर्ष के समग्र जीवन का वृतान्त भी नही है। उसने जन्म काव्य साहित्य की तरह इसमें तथ्य सुन्दर वर्णन का समन्वय प्रस्तुत किया है। इसकी कथावस्तु के मूल में मौखरियों पर आक्रमण है जिसमें मौखरि सम्राट की मृत्यु हो जाती है। दुश्मनों को निकाल बाहर करने के लिए हर्ष सेना के साथ आगे बढ़ता है। और अपनी बहन राज्यश्री की जान बचाता है। जो विन्ध्य पर्वत की ओर भागकर चिता में जल भरने की तैयारी कर रही था।

4.3.2 बिल्हण

इतिहास–लेखन में विल्हण ने भी बड़ा योगदान दिया है। उसने अपने सरंक्षक विक्रमादिय षष्टम का जीवन चरित लिखा है। बिल्हण 1040ई0 कश्मीर में पैदा हुआ था। बिल्हण के संरक्षण ने उसे विद्यापति की पदवी दी। उसने कर्णसुन्दरी नाटक की रचना की जिसमें उसने अन्हिलवाड़ के राजा कर्ण देव का मायामल्लदेव के साथ विवाह का वर्णन किया है। किन्तु उसकी सबसे महत्वपूर्ण कृति विक्रमांकदेवचरित्र है। जिसमें विक्रमादिय षष्टम के ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लेख किया गया है। विक्रमादित्य को नायक बताया हैं किन्तु बिल्हण के कथन की पुष्टि अन्य ऐतिहासिक तथ्यों के द्वारा नही की जाती है।

4.3.3 संध्याकर नन्दिन

दरबारी कवि संध्याकर नन्दिन ने पालवंशीय राजा रामपाल के शासन काल की घटनाओं का उल्लेख किया है। उसने अपनी कृति रामचारित्र में दो कथाओं को एक में करने की विधि अपनाई है। एक तो इसमें सूर्यवंशी राजा राम की कथा–वस्तु है जिसमें राम ने रावण को पराजित कर अपनी पत्नी सीता को प्राप्त किया। दूसरी ओर इसमें रामपाल की कथा है जिसने अपने शत्रु भीम को पराजित किया और अपना राज्य हासिल किया जिसे भीम ने हड़प लिया था।

4.3.4 सोमेश्वर तृतीय

सोमेश्वर तृतीय एक अन्य इतिहासकार था। उसने मानसोल्लाष की रचना की। इसमें राजा के कर्तव्यों व उसके गुणों का वर्णन है। उसकी एक अन्य कृति अपने पिता का अधूरा जीवन–चारित्र विक्रमोद्धद्‌य है। इसमें कुल तीन अध्याय है। प्रथम अध्याय मे कर्नाटक के भूगोल व वहाँ के लोगो का वर्णन है। द्वितीय अध्याय में कल्याण के ऐश्वर्य के बारे में है। तृतीय अध्याय

में चालुक्य राजवंश का वर्णन है। सोमेश्वर देव की रचनाओं में ऐतिहासिक तथ्यों का भी समावेश हुआ है। उसे शाही नायकों तथा तैलप द्वितीय को विक्रमादित्य षष्टम को विष्णु का अवतार माना है।

4.3.5 जगनिक

जगनिक एक अन्य लेखक था जिसने पृथ्वीराज विजय काव्य लिखा। इसमें उसने उत्तरी राजस्थान के चाहमान शासक पृथ्वीराज क शौर्य का उल्लेख किया है। जगनक कश्मीर का रहने वाला था। उसे संभवतः वाल्मीकि की रामायण ने पृथ्वीराज विजय की रचना की प्रेरणा प्राप्त हुई थी। संभवतः उसने 1191 व 1193 के बीच इसकी रचना पूर्ण की थी। जगनक ने अपने को वाल्मीकि का अवतार बतलाने का प्रयास किया है। और कहा कि जिस प्रकार वह्मा के कहने पर वाल्मीकि ने रामायण की रचना की उसी प्रकार माँ शारदा के कहने पर उसने पृथ्वीराज विजय की रचना की है।

4.3.6 चन्द्रबरदाई

चन्द्रबरदाई के पृथ्वीराजरासो महाकाव्य में भी यह उल्लिखित है कि गहडवाल राज कुमारी संयोगिता पृथ्वीराज के शौर्य–वीर्य के काकी प्रभावित थी और उनसे विवाह करना चाहती थी किन्तु उनके पिता जयचन्द्र की पृथ्वीराज से दुश्मनी थी और वह ऐसा नही चाहता था अंततोगत्वा पृथ्वीराज संयोगिता से विवाह करने में सफल रहे। पृथ्वीराज के दरबार के कवि चन्द्रबरदाई ने पृथ्वीराजरासो की रचना की। इसमें चौहान राजपूतों की उत्पत्ति और उनके साहसिक कार्यों का उल्लेख है।

4.3.7 कल्हण

प्राचीन भारत में सबसे उन्नत इतिहास कल्हण ने लिखा। वह कश्मीर का ब्राह्मण था। वह कश्मीर के राजा हर्ष के मंत्री चंपक का पुत्र था। उसने 1148 ई0 में लिखना शुरू किया और उसे दो वर्षों में पूरा किया। उसकी कृति

राजतरंगिणी में कश्मीर का इतिहास है। इसमें किसी विशेष राजवंश का उल्लेख नही मिलता है। इसकी रचना करते समय कहल्ण ने समसायिक दस्तावेजो, शिलालेखो, मुद्रा, प्राचीन स्मारको आदि का गहरा अध्ययन किया था। इससे पता चलता है कि वह आधुनिक इतिहास लेखन कला से परचित था। राजतरंगिणी में लगभग 8000 संस्कृत छन्द है। इसे 3 भागों में बाँटा जा सकता है। कल्हण ने पौराणिक राजा वंश तथा ललितादित्य, मेधवाहन, एवं मिहिरकुल के शासनकाल की घटनाओं का उल्लेख किया है। वस्तुतः राजतरंगिणी सही अर्थ में इतिहास है। मूल भारतीय चिंतन अनिवार्य रूप से दुःखो के आत्यंतिक विनाश अथवा मुक्ति की आर उन्मुख रहा है। यहाँ धर्म व दर्शन पर अधिक बल दिया गया है। यहाँ राज्यों अथवा राजाओं का इतिहास लेखन उनके अधिकारियों का उत्तरदायित्व समझा जाता था। सम्पूर्ण संस्कृति इसके प्रति अधिक रूचि नही रखती थी। इस प्रसंग में कौटिल्य ने इतिहास के घटक अंगों का भी उल्लेख किया है जिसके अनुसार इतिहास के अन्तर्गत पुराण, इतिवृत आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र सभी आते है।

भारतीय ऐतिहाासिक परंपरा के विकास में सूतो का महत्वपूर्ण योग रहा है। वैदिक युग की राजनीतिक संरचना में इन्हें महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। परंपरा के अनुसार इन्हें राजकीय शिक्षको की वंशतालिका बनाने व उन्हें सुरक्षित रखने का श्रेय प्राप्त है। वंश सहित्य की सृजन की परंपरा दीर्घकाल तक चलती रही। वंश और वंशानुचरित्र पुराण साहित्य के आवश्यक अंग बताए गए है। पुराणो में विभिन्न शासक वंशो के वंशावली दिए गए है। तथा पुराणें की संख्या 18 है। जो ऐतिहासिक रूप से काफी महत्पूर्ण है। भारतीय चिंतन में अवतार वाद के सिद्धान्त से यदि धार्मिक परिच्छाया को हटा दिया जाये तो विविध अवतारों को इस प्रकार के महान व्यक्तियो के रूप में समझा जा सकता है। गीता में अवतारवाद के सिद्धान्त को सर्वाधिक सुन्दर ढंग से व्यक्त किया गया है।

4.4 सारांश

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि प्राचीन भारत में इतिहास लेखन कला विकसित नही थी किन्तु इसी आधार पर कह देना उपर्युक्त नही होगा कि प्राचीन भारत ऐतिहासिक घटनाओं से शून्य था। यह ठीक है कि प्राचीन भारत कोई क्रमबद्ध था तिथिपरक इतिहास नही मिलता। विंटरनित्ज का यह कथन आंशिक रूप में सत्य है कि "प्राचीन भारत के मनीषियो ने इतिहास लेखन की ओर कोई ध्यान नही दिया। प्राचीन भारत में इतिहास महाकाव्य का एक शाखा मात्र था।" राजतरंगिणी को छोड़कर किसी अन्य प्राचीन साहित्य को इतिहास की संज्ञा नही दी जा सकती।

4.5 शब्दावली

राजतरंगिणी– कश्मीर इतिहास पर कल्हण द्वारा रचित पुस्तक

4.6 बोध प्रश्न

1. प्राचीन भारतीय इतिहास की परम्परा एवं लेखन के विषय में वर्णन करें।

....
....
....

2. इतिहास लेखन की पौराणिक परम्परा का वर्णन करें।

....
....
....

3. इतिहास लेखन पर कल्हण की दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए।

4.7 सहायक ग्रन्थ

1.श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011

2. बुद्धप्रकाश, इतिहास दर्शन,प्रयाग,1962

3. सिंह परमानन्द, इतिहास दर्शन,मोतीलाल बनारसी दास,नई दिल्ली,2000

4.पाण्डे,गोविन्द चन्द्र,इतिहासः स्वरूप और सिद्धान्त,राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर,1973

इकाई : 05 – 20वीं शताब्दी से वर्तमान तक का इतिहास लेखन

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 भारतीय इतिहास–लेखन

5.3 इतिहास–लेखन का साम्राज्यवादी दृष्टिकोण

5.4 इतिहास लेखन का राष्ट्रवादी दृष्टिकोण

5.5 मार्क्सवादी इतिहास लेखन

5.6. इतिहास की एक नई परिभाषा

5.7. 'सबॉल्टर्न' या अवर अध्ययन

5.8. निम्न वर्गीय इतिहास लेखन की प्रवृत्ति

5.9 सारांश

5.10 शब्दावली

5.11 बोध प्रश्न

5.12 सहायक ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान सकेंगें—

- 20 वीं शताब्दी से लेकर वर्तमान समय तक के इतिहास लेखन के विभिन्न आयामों के विषय में।
- विभिन्न इतिहास लेखन के दृष्टिकोणों के विषय में।
- इतिहास लेखन के बदलते स्वरूप के विषय में।

5.1 प्रस्तावना

इतिहास लेखन इतिहास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष होता है जिसके आधार पर आप यह अनुमान लगा सकेतें है कि किस प्रकार सामाजिक मूल्यों एवं परिस्थिति के अनुसार इतिहास लेखन का स्वरूप बदलता रहता है। उस बदलते हुए स्वरूपों को जानना इतिहास के शिक्षार्थियों के लिए अत्यन्त आवश्यक है। भारतीय इतिहास लेखन की परम्परा पर यूरोपीय इतिहासकारों के द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि भारत में इतिहास लेखन की कोई परम्परा नही थी। अर्थात भारतीयों में ऐतिहासिक बुद्दि का अभाव था। यूरोपीय इतिहासकारों के साथ ही कुछ भारतीय इतिहासकार भी यह मानते थे कि भारतीयो में इतिहास के प्रति चेतना का अभाव था। लेकिन उनके द्वारा लगाया गया यह आरोप पूर्णत गलत है। उनके इस दावे को विभिन्न भारतीय इतिहासकारों ने अपने तर्को एवं तथ्यों के आधार पर खारिज किया है। उनके अनुसार भारत में इतिहास को यूरोपीय इतिहासकारों ने उसे भारतीय दृष्टिकोण नही देखा है जिसके कारण उन्होने भारत के इतिहास के विषय में इस प्रकार बातों का विवरण दिया है। लेकिन भारत में इतिहास लेखन की एक सशक्त तथा वैज्ञानिक परम्परा विद्यमान थी जिसका मूल उत्स वैदिक साहित्य में वर्णित विविध वंश,वंशावली तथा ऋषियों की सूची से ज्ञात होता है। भारत में इतिहास की परम्परा पाश्चात्य परम्परा से पूर्णत अलग थी। जहाँ

भारतीय परम्परा मूलतः मूल्यपरक, नीतिपरक तथा आध्यात्परक है वहीं पाश्चात्य परम्परा इसके विपरीत सिद्वान्तों पर आधारित है।

भारतीयों अपने प्राचीन धर्म तथा समाज में सुधार लाने तथा अपनी प्राचीन संस्कृति को पुनर्जीवित करने की दिशा में प्रवृत्त हुए। इस प्रकृति ने पुनर्जागरण का रूप ले लिया जिसके फलस्वरूप भारतीयो में आत्मनिर्भरता आत्मसम्मान और आत्मविश्वास की भावनाओं का संचार हुआ। भारत में एक प्रकार से राष्ट्रीय सजगता का भाव जागृत हुआ। इस अभिनव चेतना को एक ऐतिहासिक चेतना के रूप में महत्व दिया गया था। बंकिम चन्द्र चटर्जी ने यह कहा कि एकता का भाव राष्ट्रीय गौरव तथा मुक्ति की आकांक्षा उत्पन्न करने के एक साधन के रूप में इतिहास के अध्ययन तथा लेखन से अधिक मौलिक और कुछ नही था। बंकिम चन्द्र चटर्जी ने जिस त्रुटि की पहचान की उसका निदान करने की प्रवृत्ति भारतीय इतिहासकारो ने किया। वे इतिहासकार थे जिन्होंने 20वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में लिखा गया, जब राष्ट्रवाद की उद्‌दात्त भावना ने प्रेरित होकर ऐतिहासिक लेखन तथा व्याख्या एवं विवेचन के लिए विचारधारात्मक आधार प्रदान किया। इतिहास लेखन के विभिन्न दृष्टिकोण दृष्टिगत होते है।

5.2 भारतीय इतिहास–लेखन

भारतीय इतिहास लेखन के विषय में अनेक मत–मतान्तर है। यह कहा जाता है कि भारतीयो में इतिहास बोध नही था। अर्थात उनमें इतिहास के प्रति उदासीनता व्याप्त थी। अनेक पाश्चात्य एवं भारतीय इतिहासकारों के एक वर्ग विशेष द्वारा इस प्रकार के आरोप लगाये गये। प्रो.ए.के वार्डर के अनुसार भारतीय इतिहास लेखन परिचय नामक पुस्तक में कहते है कि वैदिक काल से आधुनिक काल तक भारतीय इतिहास में तारतम्यता है। प्राचीन भारत का इतिहास पांडुलिपियों में बिखरा पड़ा है। डॉ.रमेश चन्द्र मजुमदार के अनुसार प्राचीन भारतीय इतिहास लेखन काल से अपरिचित नही थे। भारतीय इतिहास

लेखन की अपनी परम्परा एवं विशिष्टता रही है। जो पाश्चात्य विचारधारा के बिलकुल विपरीत है।

5.3 इतिहास–लेखन का साम्राज्यवादी दृष्टिकोण

भारत में प्रथम महत्वपूर्ण इतिहास जेम्स मिल ने लिखा जो लन्दन में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का एक अधिकारी था। साम्राज्यवादी इतिहासकारों ने भारत को एक राष्ट्र के रूप में संगठित एवं राष्ट्रीय चेतना के विकास के विभिन्न भौतिक के सन्दर्भ में अनेक प्रकार के प्रश्न खड़ा किये थे। 1772 ई. में वारेन हेस्टिंग्स भारत गर्वनर जनरल बनकर आये। तथा 1784 ई. में एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना की गयी। गर्वनर जनरल का मानना था कि यदि भारत में एक मजबूत शासन को स्थापित करना है तो उसके लिए प्रत्येक ब्रिटिश अधिकारी को भारतीय समाज एवं संस्कृति को जानना अत्यन्त अनिवार्य है। भारतीय समाज व संस्कृति की जो 'इवैजेलिकल' उपयोगितावादी तस्वीर चार्ल्स ग्रांट की ऑब्जर्वेशंस तथा जेम्स मिल की हिस्ट्री में प्रस्तुत की गई। उसने कुछ ऐतिहासिक रूप से जड़ीभूत मान्यताओं को लोकप्रियता प्रदान की। इन मान्यताओं ने न केवल भारत पर केन्द्रित यूरोपीय इतिहास लेखन को बल्कि इतिहास के दर्शनो को भी प्रभावित किया।

इनमें पहली धारणा निश्चल–निष्क्रिय परिवर्तनरहित भारतीय समाज से संबद्ध थी। मिल ने निरंतर यह विचार व्यक्त किया कि आर्यों के आगमन से अंग्रेजों के आगमन तक भारतीय समाज काकी हद तक अपरिवर्तित रहा था। एक परिवर्तनरहित समाज की संकल्पना ने हीगल द्वारा प्रवर्तित इतिहास के दर्शन पर प्रत्यक्ष प्रभाव डाला। हीगल की दृष्टि में वास्वतिक इतिहास में द्वंद्वात्मक परिवर्तन तथा विकास की प्रक्रियाएं समाहित थी। भारतीय समाज जैसाकि जर्मन दार्शनिक को विदित था, निश्चल तथा निश्चित और इसलिए विश्व इतिहास की मुख्य धारा से बाहर रहा। मिल द्वारा हिन्दू, मुस्लिम और ब्रिटिश कालो में भारतीय इतिहास का विभाजन हमारे अपने समय तक प्रचलन में

रहा है। क्रिश्चियन लैसेन ने भारतीय इतिहास के इस काल विभाजन के लिए हीगल की द्वंद्वात्मकता का प्रयोग किया। अंतर केवल इतना था कि 'थीसिस' 'एटीथीसिस' 'सिथीसिस' के तीन चरणों के स्थान पर उन्होंने हिन्दु , मुस्लिम, व ईसाई का प्रयोग किया। हयातव्य है कि उन्होंने 'ईसाई' शब्द का प्रयोग किया न कि ब्रिटिश शब्द का जैसा मिल ने किया। किन्तु लैसेन हीगल द्वारा प्रस्तुत इस धारणा का खंडन नही कर पाए भारत का अतीत अपरिवर्तित रहा है।

प्राच्य निरंकुशता एक अपरिवर्तनशील समाज की इस संकल्पना का एक अन्य पक्ष है ऐसा विश्वास किया गया कि भारतीय समाज का आधार भारतीय गांव की अपरिवर्तनीय प्रणाली थी। इस गांव में ऐसे लोग रहते थे जो राजनैतिक संबंधों से पूरी तरह असंपृक्त थे। पाश्चात्य चिंतक और इतिहासकार की दृष्टि में राजनैतिक चेतना के अभाव तथा निजी संपत्ति की अनुपस्थिति ने ही अंततः प्राच्य निरंकुशता को जन्म दिया। रोमिला था पर लिखती है कि भारतीय समाज के निश्चल, जड़ीभूत चरित्र तथा इसके साथ–साथ निरंकुश शासको का प्रभुत्व भारतीय इतिहास का एक स्वीकृत सत्य बन गया। प्राच्य निरंकुशता की संकल्पना आकार ग्रहण करने लगी। "भारत के अतीत की अपरिवर्तनशील प्रकृति से संबंधित अवधारणा को मार्क्स ने अपनाया और इसे उत्पादन की एशियाटिक पद्धति की वैचारिक प्रस्तुति में ढाला गया आत्मनिर्भर ग्राम अर्थव्यवस्था और भूमि पर निजी स्वाभित्व का अभाव एशियाटिक उत्पादन पद्धति के संलक्षण थे।

भारत पर ब्रिटिश साम्राज्यवादी इतिहास–लेख की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता राजनैतिक तत्व की प्रधानता थी। यहाँ ब्रिटिश पूर्वाग्रह, नैतिकता सिद्ध करने की प्रवृत्ति, तीव्र पक्षपात और मूल्यातिरेक से ओत–प्रोत आवेगो की स्वच्छंद अभिव्यक्ति हुई। लेखको को भारतीय जीवन एवं संस्कृति में अधिक रूचि नही थी। और आर्थिक मुद्रों पर केवल उसी स्थिति में विचार किया गया जब उनका कोई राजनैतिक प्रयोजन था। जिन पुस्तको की रचना

हुई वे प्रायः ब्रिटिश शासनकाल तक ही सीमित थी और केवल ब्रिटिश क्रिया—कलापों से संबंध रखती थी। उन्होंने केवल ब्रिटिश दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया।

5.4 इतिहास लेखन का राष्ट्रवादी दृष्टिकोण

भारतीय इतिहास लेखन के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रवादी इतिहास तथा राष्ट्रवादी इतिहास—लेख' विदेशी और विशेषकर ब्रिटिश लेखको के औपनिवेशिक या साम्राज्यवादी प्रवृत्ति के बरक्स एक तुलनात्मक अर्थ में प्रयुक्त होने वाले पद है। वैध राष्ट्रीय गौरव से ओत—प्रोत भारतीय विद्वानों की एक उदीयमान पीढ़ी ने अपनी राष्ट्रीय संस्कृति को यूरोपीय लेखको के निराधार आरोपो के प्रहार से बचाने का प्रयत्न किया। यद्यपि ऐतिहासिक पुनर्निर्माण के सच्चे सिद्धान्तों में यदाकदा कुछ त्रुटियां दृष्टिगोचर हुई, आलोच्य पदो का अभिप्राय ऐतिहासिक लेखकों या कृतियों का एक ऐसा समूह नही माना जाना चाहिए जिसका एकमात्र उद्देश्य भारत के अतीत का महिमा मंडन था। आर0 सी0 मजूमदार "राष्ट्रवादी इतिहासकार" पद का प्रयोग केवल उन्हीं भारतीयों के लिए करते हैं जिन्होंने अपने देश के इतिहास की पुनः प्रस्तुति के क्रम में परीक्षण अथवा पुनः—परीक्षण को अपना लक्ष्य बनाया।

5.5 इतिहास लेखन का मार्क्सवादी दृष्टिकोण

मार्क्सवादी इतिहास का प्रारम्भ राष्ट्रवादी विचारधारा के परिणामस्वरूप सामने आता है। प्रसिद्व इतिहासकार डॉ. डी.डी.कोसाम्बी ने इतिहास लेखन के सम्बन्ध में यह स्पष्ट किया है। वैचारिक दृष्टि एवं चेतना के आधार पर इतिहास लेखन में इसके महत्व को रेखांकित किया जाता है। किसी काल का इतिहास एक अर्थ में सम्पूर्ण सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक सन्दर्भो का महत्वपूर्ण अभिलेख स्वीकार किया जाता है। इतिहास की अपनी गति होती है जिसके आधार किसी देश की परिस्थिति का विकास होता है। डॉ. राम विलास शर्मा के अनुसार भाषा के बिना साहित्य का कोई

अस्तित्व नहीं है। मानव समाज के गठन के रूप बदलते रहते है, पूजीवादी समाज, उससे पहले सामन्ती समाज और उससे पहले कबीलाई समाज इसमें सामाजिक गठन के रूप एवं स्वरूप अलग तरह के होते है। विचारधारा का प्रभाव भाषा पर सर्वाधिक पडता है।

कार्ल मार्क्स भारतीय समाज की स्थितियों का विवेचन करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुचे थे कि भारतीय इतिहास में स्वर्णकाल कभी नहीं था। कार्ल मार्क्स एवं एंगेल्स मूलतः राजनीतिक चिन्तक थे लेकिन इतिहास–दृष्टि भी रखते थे। उन्होने इतिहास का गहराई से निरीक्षण एवं इतिहास के मर्म को अनुभव किया। उसने जिस वैज्ञानिक विचारधारा और चिन्तन पद्वति का प्रवर्तन किया था, उसका विकास अनेक रूपों में दृष्टिगत हुआ। मार्क्सवाद एक वैज्ञानिक दर्शन के रूप में कला, साहित्य, संस्कृति, इतिहास, राजनीति के क्षेत्र में एक अभिनव प्रयोग था जिसे कालान्तर में चिन्तकों ने अपने–अपने ढंग से विकसित किया।

इतिहास के क्षेत्र में 1844 ई. में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद और ऐतिहासिक भौतिकवाद की जो स्थापनाएं की, उसके कारण चिन्तन के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन आया था। अन्तोनियों ग्राम्शी का मार्क्सवादी चिन्तन के विकास में महत्वपूर्ण सृजनात्मक योगदान रहा है। उसने अपने चिन्तन में मुख्यतः इटली की राजनीतिक स्थितियों एवं विश्व इतिहास की चिन्तन धारा पर केन्द्रित किया था। उसने ऐतिहासिक अनिवार्यता का प्रतिपादन करते हुए उसे इतिहास सापेक्ष माना है। उन्होने सांस्कृतिक, राजनीतिक और कलात्मक आलोचना में सामजस्य की धारणा विकसित की थी। उसके अनुसार इतिहास गतिशील होता है तथा उसका गहन अध्ययन सम्बन्ध सांस्कृतिक राजनीति से होता है। उन्होने इतिहास धारा में अपनी वर्गीय चेतना और दृष्टि के साथ सम्मिलित होने के लिए बुद्विजीवियों का आवाहन किया था। क्योकि वे विश्वास करते थे कि समाज और देश के क्रान्तिकारी परिवर्तन में बुद्विजीवियों

की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। यही कारण है कि वे लेखक के सामाजिक चरित्र की परख उसको ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में रखकर करते थे।

भारतीय इतिहासकार डॉ. डी.डी.कोसाम्बी मार्क्सवादी चिन्तको ंमें प्रथम थे जिन्होने विश्व इतिहास के परिप्रेक्ष्य में भारतीय इतिहास और कला, संस्कृति का मार्क्सीय दृष्टि से अध्ययन–विश्लेषण प्रस्तुत किया तथा पहली बार भारतीय समाज के राजनीतिक,सामाजिक और सांस्कृतिक अन्तर्विरोधों को उद्घाटित करने का प्रयास किया।

भारत में इस प्रकार का एक इतिहास–लेख विकसित हुआ जिसकी जड़े राष्ट्रवादी इतिहासकारों के लेखनो में गहराई तक पैठी हुई थी और जिसका उद्भव मूल मार्क्सवाद में रूचि में अंतर्भूत था। मार्क्सवादी चरण (इतिहासकारो) से आशय यह नही है कि सभी लेखक मार्क्सवादी थे किन्तु उन्होंने कमोवेश भौतिकवादी व्याख्या का ऐतिहाासिक घटना को जाने न समझने की एक पद्धति के रूप मे अपनाया। इनमें से कुछ लेखको ने इतिहास और विशेषकर प्राचीन इतिहास के बारे में यह दृष्टिकोण व्यक्त किया कि इसका अध्ययन सर्वोत्तम रूप में समाज विज्ञान विषय के ढांचे के अंतर्गत हो सकता है। इसकी व्याख्या कार्ल मार्क्स के ऐतिहासिक दर्शन और विशेषकर द्वंद्वात्मक भौतिकवाद से उद्भूत हुई। नए अभिगम का सार तत्व सामाजिक और आर्थिक संगठन के मध्य संबध और ऐतिहासिक घटनाओं पर इसके प्रभाव के अध्ययन में निहित है। नई प्रवृत्ति ने किसी नए साक्ष्य की बजाय उपलब्ध स्रोतों के पुनः अध्ययन पर बल दिया और इस दृष्टि से नए और पहले से भिन्न प्रश्न उठाए। भारतीय इतिहास–लेख की मार्क्सवादी धारा के सबसे प्रखर पुरोधा डॉ. दामोदर धर्मानंद कोसाम्बी की रचनाएँ एवं प्रवृत्ति की सबसे जीवंत अभिव्यक्ति है।

5.6. इतिहास की एक नई परिभाषा

प्राचीन भारत के अध्ययन में सबसे बड़ी बाधा विश्वस्त रिकार्डो और सटीक कालक्रम का अभाव है। कौशाम्बी कहते है कि इसी कारणवश प्राचीन यूरोपीय परंपरा में इतिहस–लेख की प्रत्यक्ष प्रविधि को भारतीय संदर्भ में अपनाना निरर्थक है किन्तु हम यह जान सकते है कि उन अत्यंत प्राचीन काल खंडो में जिसके स्त्रोतो और साक्ष्यों के ठोस रूप उपलब्ध नही है लोग किस तरह जीवन–यापन करते थे। यह निश्चित है कि उनका जीवन एवं रहन सहन हमेश एक जैसा नही रहा होगा। खाद्य–संग्राहक, अर्धपाशविक चरण से खाद्य–उत्पादन के उन्नत चरण में प्रवेश किया तो निश्चित रूप से उनका जीवन स्तर केवल पाशवित जीवन के स्तर से अधिक ऊँचा हो गया। जैसा **गोर्डन गोर्डन चाइल्ड** अपनी मुहावरेदार प्रांजल शैली में कहते हैं, "मनुष्य स्वय अपना निर्माता होता है।" मनुष्य विभिन्न प्रकार के उपकरणों और हथियारों का प्रयोग करके और आत्मसृजन की और उन्मुख होकर उस उद्देश्य को प्राप्त करता है जिससे कि वह पर्यावरण के संसाधनो का समुचित अपयोग कर सके। और अपने जीवन को बेहतर बना सके।

इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि जब किस भी उसके उपकरणों या भौतिक–उत्पादन के साधनो की मात्रा और गुणवत्ता में परिवर्तन ऐतिहासिक दृष्टि से प्रामाणिक है। उदाहरण के लिए यह तथ्य "उत्पादन के साधनो में प्रत्येक महत्वपूर्ण आधारभूत खोज के साथ–साथ मानव–आबादी में तुलनात्मक रूप में आकास्मिक वृद्धि।" के रूप में दिखाई देता है। भौतिक उत्पादन के साधन सामाजिक संगठन को निर्धारित करते है। जो उनसे अधिक उन्नत नही हो सकते। मानव–जीवन का यह तथ्य अर्थात् जीवन और उपलब्ध उत्पादन के साधनो के बीच यह आंतरिक संबंध जिसके अंतर्गत जीवन उन साधनों की गति के अनुरूप विकसित होता है, इतिहास की विषयवस्तु और पद्धति की आधारशिला है। तदनंतर कौशाम्बी इतिहास की अपनी परिभाषा "उत्पादन के साधनो तथा संबंधों के क्रमिक

विकास की कालक्रम व्यवस्था के अनुसार प्रस्तुति" है। इस परिभाषा से इतिहास के एक निश्चित सिद्धान्त का संकेत मिलता है। जिसे द्वंद्वात्मक भौतिकवाद या मार्क्सवाद के रूप में जाना जाता है। यह एक क्लासीसिक वक्तव्य है जो कार्लमार्क्स की पुस्तक क्रीटीक ऑक पोलिटिकल इकोनोमी की भूमिका में मिलता है। कौशाम्बी कहते हैं कि "यह निश्चित रूप से अब तक ज्ञात एक मात्र ऐसी परिभाषा है जो सामान्यतः प्रागैतिहासिक के रूप में विविद पूर्व–साक्षर इतिहास के प्रति युक्ति संगत दृष्टिकोण अपनाने का अवसर देती है।"

5.7. 'सबॉल्टर्न' या अवर अध्ययन

सबॉल्टर्न स्टडीज के नाम से पुस्तकों की एक श्रंखला, जो बीसवीं शताब्दी के अंतिम दो दशकों में प्रकाशित हुई है ने आधुनिक भारत पर इतिहास–लेख की लगभग एक पूरी तरह नई धारा का आरम्भ किया है। श्रंखला के प्रथम खंड का संपादन करे हुए रणजीत गुहा अपना प्रतिवाद जताते है और कहते है कि भारतीय राष्ट्रवाद का इतिहास–लेख दो प्रकार के पक्षपातपूर्ण अभिजात्यवाद से ग्रस्त है और दोनो सम्मिलित रूप से इस दृष्टिकोण का समर्थन करते है कि राष्ट्रीय चेतना का विकास और भारतीय राष्ट्र का निर्माण अभिजात्म या संभ्रांत वर्गीय उपलब्धियां थी।

इसमें से पहली धारा अर्थात् औपनिवेशिक या ब्रिटिश साम्राज्यवादी इतिहास लेखन, जो एक संकीर्ण व्यवहारवादी अभिगम पर आधारित है, भारतीय राष्ट्रवाद को ब्रिटिश विचारों, संस्थाओं, अवसरो एवं संसधनों द्वारा प्रदत्त अभिप्रेरण या उद्दीपन के प्रति भारतीय बुर्जुआ अभिजात्य वर्ग की अनुक्रिया के रूप में देखते है। इसी तरह उनकी दृष्टि से दूसरी धारा अर्थात् भारतीय राष्ट्रवादी इतिहास–लेख भारतीय राष्ट्रवाद को मूलतः एक आदर्शवादी अभियान के रूप में विचित्र करता है। जिसमें स्वदेशी अभिजात्य या संभ्रांत वर्ग ने जनसाधारण का नेतृत्व किया। और उन्हें परतंत्रता के

चंगुल से छुड़ाकर स्वाधीनता दिलाई। इन दोनों दृष्टिकोणों में से कोई भी भारतीय राष्ट्रवाद की सही व्याख्या नही प्रस्तुत करता क्योंकि यह लोगों द्वारा स्वयं अपने बल पर अर्थात् अभिजात्य वर्ग से स्वतंत्र रहकर उस राष्ट्रवाद के निर्माण एवं विकास में दिए गए योगदानो को स्वीकार नही करता गुहा के अनुसार इसी कारणवश अभिजात्यवादी इतिहास लेखन लोकप्रिय पहल के उन दृष्टांतो की व्याख्या नही कर सकता है जिन्होंने स्वयं को 1919 के रॉलेट विरोधी उफान या 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के रूप में व्यक्त किया।

गुहा दृढ़ता के साथ यह कहते है कि अभिजात्य राजनीति के समांतर सामान्य जनो की राजनीति का एक प्रभाव क्षेत्र था जिसमें 'सबॉल्टर्न' था अधीनस्थ वर्गों और समूहो के प्रमुख कार्यकर्ता थे जिनसे आबादी के अधिकांश भाग का संघटन हुआ था। वे यह महसूस करते है कि अभिजात्य इतिहास–लेख, जो इस तथ्य की पहचान नही करता है, का एक मजबूत प्रतिवाद होना चाहिए। और इसके लिए राजनीति के अवर प्रभाव क्षेत्रों की पहचान पर आधारित एक वैकल्पिक विमर्श विकसित किया जाना चाहिए। यही अवर या 'सबॉल्टर्न' इतिहास लेख के अस्तित्व के मूल में है।

5.8. निम्न वर्गीय इतिहास लेखन की प्रवृत्ति

सबॉल्टर्न स्टडीज विविध और एक दूसरे से असंबद्ध विषयों पर लेखों के संकलन है। उन सबका एकमात्र विषय निम्न वर्गों का विप्लव है। 'सबॉल्टर्न' शब्द एंटोनियो ग्राम्शी के पांडुलिपि लेखनों से लिया गया है जिसका अर्थ है "निकृष्ट या निम्न श्रेणी का" चाहे यह वर्ग, जाति, लिंग अथवा पद किसी भी दृष्टि से हो। सबॉल्टर्न स्टडीज है जो इतिहास–लेख के संदर्भ में अबतक अपेक्षित रहे है। उन्हें उनके विषयो से जोड़कर देखा जाता है जो कालिक परिप्रेक्ष्य में मुगलकाल से 1970 के दशक तक तथा विषयवस्तु की दृष्टि से संप्रदायवाद से औद्योगिक श्रम तक विस्तीर्ण है और शैली में वर्णनात्मक से अवधारणात्मक तक एक व्यापक विविधता दर्शाते है।

5.9 सारांश

इतिहास लेखन इतिहास के विभिन्न आयामों को जानने का एक सशक्त माध्यम है। इतिहास की प्रवृत्ति विभिन्न काल एवं परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहा है। इतिहास में इस बदलती हुई प्रवृत्तियों के अनुसार लेखन कार्य होता रहा है। इतिहास लेखन में मूल्यों एवं विचारधाराओं का महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

5.10 शब्दावली

सबॉल्टर्न स्टडीज–निम्न वर्गीय प्रसंग

5.11 बोधप्रश्न

. इतिहास लेखन की सबाल्टर्न परम्परा के विभिन्न आयामों का वर्णन करें।

....

....

2. इतिहास लेखन की मार्क्सवादी अवधारणा का वर्णन करें।

....

....

5.12 सहायक ग्रन्थ

1. श्रीधरन, ई. इतिहास लेख, ओरियन्ट ब्लैकश्वान,नई दिल्ली, 2011

2. बुद्वप्रकाश, इतिहास दर्शन,प्रयाग,1962

3. सिंह परमानन्द, इतिहास दर्शन,मोतीलाल बनारसी दास,नई दिल्ली, 2000

4. पाण्डे,गोविन्द चन्द्र,इतिहासः स्वरूप और सिद्वान्त,राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,जयपुर,1973